इकाई 15 चित्रकला: विविध परंपराएँ*

इकाई की रूपरेखा

15.0 उद्देश्य

15.1 भूमिका

15.2 किशनगढ़ चित्रकला–राजपूताना

15.3 पहाड़ी चित्रकला–पंजाब के पर्वतीय क्षेत्र

15.4 दख्खिन में चित्रकला का संरक्षण

15.5 सारांश

15.6 शब्दावली

15.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

15.0 उद्देश्य

इस इकाई में हम भारतीय उपमहाद्वीप के 16 वीं शती से मध्य अठारहवीं शती के दौरान प्रमुख क्षेत्रीय राज्यों में बनाई गई चित्रकलाओं का अध्ययन करेंगे। यह पारम्परिक शैलीगत पहलुओं पर ध्यान केन्द्रित करने के साथ भारतीय चित्रकला पर वर्तमान विषयगत शोध की भी स्थिति स्पष्ट करेगा। इस इकाई में दी गई जानकारी के अध्ययन के पश्चात् यह समझने में आसानी हो जायेगी कि:

(1) चित्रकला के मुख्य क्षेत्रीय केन्द्र

(2) मुगल चित्रकला और क्षेत्रीय आंचलिक शैली का आपसी सम्बन्ध और किस प्रकार शाही शैली कलाकारों द्वारा प्रान्तों तक पहुँचाई गई।

(3) कलाकारों की संस्थायें उनके कार्य और विभिन्न क्षेत्रों में उनकी गतिविधियाँ।

(4) इन क्षेत्रीय परम्पराओं को जीवित और बनाये रखने में मिलने वाले संरक्षण का महत्व।

15.1 भूमिका

1605 तक अकबर ने उत्तर, पश्चिमी और मध्य भारत के अधिकांश भाग में मुगल आधिपत्य मजबूत कर लिया था। राजनैतिक प्रभुत्व के साथ ही मुगलों ने कला और वास्तुकला के क्षेत्र में एक विशिष्ट सौन्दर्य बोध का खाका तैयार किया। मुगल राजशाही का केन्द्र–बिन्दु मुगलिया सोच और विशेषज्ञता रही है जिसमें शाही पुस्तकालय तथा उससे जुड़े तस्वीरखाना का संरक्षण मुख्य रहा है। मुगल बादशाह चित्रकला के विवेकी संरक्षक बनकर उभरे। अकबर,

*डॉ. शैलका मिश्रा, डायरेक्टर, जगदीश एंड कमला मित्तल म्यूजियम ऑफ इंडियन आर्ट, हैदराबाद

अस्वीकरण: इस इकाई में उपयोग की गई सभी छवियां केवल गैर–व्यावसायिक शैक्षिक उद्देश्यों के लिए हैं। जैसा कि संकेत दिया गया है, सभी छवियों का कॉपीराइट संस्थानों के पास रहता है। छवियों को संबंधित संस्थानों की अनुमति के बिना किसी भी रूप में पुनः प्रस्तुत नहीं किया जा सकता है।

जहांगीर और शाहजहाँ अपने मनसबदारों (सामन्तों) को संरक्षण में मुगल आदर्शों को अपनाने के लिये उत्साहित करते थे। पूर्वी और पश्चिमी भारत में मुगलों से पूर्व हस्त चित्रकला का चलन था, मुगल काल की अवधि में चित्रकला सम्बन्धी विषयों और उनके चित्रण में उल्लेखनीय बदलाव देखा गया। संरक्षण का स्वभाव परिवर्तित हो गया और धार्मिक संस्थाओं के साथ–साथ क्षेत्रीय राज्यों जिनको मुगल साम्राज्य का सामना करना पड़ा को भी चित्रकला का केन्द्र बनाया गया। 16वीं शताब्दी और 19वीं शताब्दी के मध्य, क्षेत्रीय राज्यों में चित्रकला दो प्रमुख भौगोलिक क्षेत्रों में पनपी, जिनमें आज का राजस्थान, मध्य प्रदेश और पंजाब के पर्वतीय क्षेत्र, जिनको अक्सर 'राजपूत' चित्रकला से संदर्भित किया जाता था। इसी समयावधि में 'दक्षिण' में मुस्लिम सुल्तानों के अन्तर्गत चित्रकला पनपती रही।

15.2 किशनगढ़ चित्रकला–राजपूताना

चित्रकला पर आरम्भिक राष्ट्रवादी अध्धयनों में राजपूती चित्रकला को मुगल या इस्लामिक परम्परा से भिन्न माना गया। राजपूत चित्रकला की ओर ध्यान आकृष्ट करने वाले पहले कला इतिहासकार आनन्द कुमारस्वामी थे, उन्होंने कहा है कि मुगल चित्रकला धर्म निरपेक्ष, व्यक्तित्व की विशेषता, प्रकृतिवाद में रूचि लेने वाली और समकालीन ऐतिहासिक घटनाओं को प्रदर्शित करने वाली थी। दूसरी ओर, राजपूत चित्रकला मुख्य रूप से रहस्यमयी, गहन प्रतीकात्मक और पारलौकिक होती थी[2]। कुछ समय पूर्व तक, यह भारतीय चित्रकला की बहसों में बनी रही[3]। कला–इतिहासकारों ने अपने हाल में लेखों में इस द्वैध पर प्रश्न उठाये हैं। मतभेदों की ओर स्पष्ट रूप से इशारा करने के बजाय, शोध का केन्द्र मुगल और राजपूतों के करीबी सम्बन्धों पर रहा है, जो दो संस्कारों के अर्थपूर्ण मिलन और आदान–प्रदान को प्रोत्साहित करता था[4]।

अकबर की राजनीतिक व्यवहारिक नीतियों के द्वारा राजपूतों को मुगल राजनीति, प्रशासन और परिवार में समाहित किया गया। 16वीं शताब्दी के मध्य से, साम्राज्य के विस्तार और अकबर द्वारा अपनी स्थिति को शहंशाह तक मजबूत करने में राजपूत राजाओं (केवल मेवाड़ के राज को छोड़कर) ने मुगल आधिपत्य को स्वीकार कर लिया। राजपूत राजा और युवराज शाही सेवा में ओहदेदार के रूप में स्वीकार किये गये और उनको उच्च मसनब प्रदान की गई। उनकों इस बात की इजाजत दी गई कि वे अपनी पैतृक भूमि पर अपना नियंत्रण रख सकें जो उनको मुगल भूमि की कार्य व्यवस्था में वतन जागीर के हिस्से के रूप स्वीकृत की जाती थी। राजपूत राजाओं को शाही सेवा के लिये सैनिक भेजने होते थे और मुगल दरबार में हाजिरी लगानी होती थी।

[2] Ananda Coomaraswamy, *Rajput Painting: Being an Account of the Hindu Paintings of Rajasthan and the Panjab Himalayas from the Sixteenth to the Nineteenth Century, Described in Their Relation to Contemporary Thought with Texts and Translations* (London, New York: H. Milford, Oxford University Press,1916), 20.

[3] For example, consider the following statement in the volume on Mughal and Rajput Painting in *The New Cambridge History of India,* a standard reference book for historians. "Rajput and Mughal, then, can be equated with Hindu and Muslim, or even with indigenous and foreign: and the study of these paintings allows us to see how two quite different cultural systems react to the same visual stimulus – to India — as well as to each other." Milo Cleveland Beach, *Mughal and Rajput Painting*, *The New Cambridge History of India* (Cambridge: Camridge University Press, 1992, Reprint 2002), 2.

[4] Kavita Singh, "A Knowing Look: Appropriation and Subversion of the Mughal Idiom in Rajput Paintings of the Eighteenth Century" in Mahesh Sharma, Padma Kaimal (ed.) *Indian Paintings: Themes, Histories, Interpretations Essays in Honour of B. N. Goswamy* (Mapin Publishing Pvt. Ltd, 2013): 168-169; Molly Aitken, "Introduction", *A Magic World: New Visions of Indian Painting*(Mumbai: Marg Foundation, 2016), 10-19.

1561 में कछवाहा भारमल ने अपनी बेटी का हाथ विवाह हेतु अकबर को दिया। इस प्रकार यह वैवाहिक सम्बन्धों की एक शुरूआत थी, जिसके बाद यह सिलसिला बन गया। बड़ी संख्या में राजपूत राजकुमारियाँ मुगल परिवारों के ब्याही गई और राजपूत रानियाँ मुगल राजाओं व राजकुमारों की माँ बनी। परिणाम स्वरूप, राजपूत मुगलों के नजदीकी सहयोगी हो गये[5]। अधिकांश समय मुगलों के बीच में बिताने के कारण उन्होंने मुगल दरबार के तौर तरीके और उनके संस्कारों को अपनाना शुरू कर दिया और चित्रकला में संरक्षण देना शुरू कर दिया। कविता सिंह कहती हैं "चित्रकला को एक दरबारी कला का स्वरूप–उच्च गुणों से युक्त चित्र बनाया जाना, बारीकी से बनायी गयी कला की वस्तुएँ, जो धर्म निरपेक्ष और विशिष्टता के उद्देय से बनाई गई–लगता है मुगलों द्वारा ही भारत में लाई गई"[6]

राजपूतों को मुगल चित्रांकन भा गया। मुगल काल से भी पहले भारतीय चित्रकला में चित्रांकन का अभ्यास होता रहा था, लेकिन वह मुगल– चित्रांकन से भिन्न था, जहाँ पर वैयक्तीकरण को पसन्द किया जाता था, और वे पहचान के लिये अभिलेख उत्कीर्णन पर विश्वास करते थे।[7] आरंभ में राजपूत शासकों और राजकुमारों के चित्र मुगल बादशाहों के लिये तैयार किये जाते थे। अकबर के लिये उसके काल में बहुत बड़ा एलबम उसके सभ्रान्त कुलीनों के चित्रों का बनाया गया था। ये चित्र उन रुचि और शैलियों को परिभाषित करते थे, जो राजस्थान के चित्रकारों द्वारा अंगीकृत किये गये। उदास हरे रंग की तटस्थ पृष्ठभूमि में चित्रित पार्श्वचित्र में मुख दिखाया जाता और शरीर का तीन चौथाई भाग दर्शक की ओर कर दिया जाता (चित्र. 1 आमेर के मान सिंह)

चित्र-1: आमेर के राजा मान सिंह का पोर्ट्रेट, ca. 1590, Metropolitan Museum of Art, Purchase, Gift of Jacques L. Galef and Bequest of Charles R. Gerth, by exchange, 1982.174

राजपूत शासक भी मुगल चित्रकारों को अपने चित्र बनाये जाने के लिये कार्य पर लगाते, जिनकों घर पर वंशजों के चित्रों के साथ एकत्र किया जाता था। मुगल शैली के कुछ सुन्दरतम चित्र आमेर और जोधपुर के राजाओं के लिये बनाये गये। आमेर के मिर्जा राजा जय सिंह प्रथम (1621–27) और जोधपुर के महाराजा गज सिंह (1619–38) (चित्र 2) का उत्कृष्ट दोहरा चित्र, संभवतः मुगल चित्रकार ने आमेर के शासक के लिये बनाया। चित्रों में देवनागरी में लिखा उत्कीर्णन इसकी पहचान करता है।

[5] Rajput rulers were conscious of their dual roles as Mughal nobles and rulers of their own kingdoms. They recognized that both roles were crucial to their identity. Catherine Asher points to an inscription on the Rohtas Palace in Bihar which was patronized by Man Singh of Amber (r. 1589-1614). In the Persian inscription Man Singh is acknowledged as the Mughal servant, but the Sanskrit portion stresses on Man Singh's position as the Kachhawaha ruler of Amber. The latter inscription makes no reference to the Mughal emperor. See Catherine B. Asher, "Excavating Communalism: Kachhwaha *Rajdharma* and Mughal Sovereignty" in Rajat Datta (ed.) *Rethinking a Millenium: Perspectives on Indian History from the 8th to the 18th century, Essays ForHarbans Mukhiya* (Aakar Books, 2008), 225.

[6] Singh, "A Knowing Look", 169.

[7] Aitken, *The Intelligence of Tradition*, 113.

चित्र-2: आमेर के महाराजा जय सिंह और मारवाड़ के महाराजा गज सिंह, एम्बर एल्बम से फोलियो, बिचित्र को जिम्मेदार ठहराया (भारत, सक्रिय सी। 1610–सी। 1660), ca. 1630, © LACMA, From the Nasli and Alice Heeramaneck Collection, Museum Associates Purchase, M.80.6.6

स्वर्ण से बने सुसंपन्न तख्त–राजगद्दी पर बैठे हुए जय सिंह–प्रथम, गज सिंह को उनकी आवाभगत के प्रतीक स्वरूप सम्मान से पान प्रस्तुत करते हैं। उनके सिरों के ऊपर की ओर यूरोपीय देवदूतों का जोड़ा स्वर्ण निर्मित चंदवा लिये हुए है, जिस पर सफाविद आकृतियाँ बैठी हुई दिखाई देती हैं। राजगद्दी के नीचे के फर्श पर एक नीला अरबी कालीन बिछा हुआ है। उनके पद और सम्पत्ति की स्थिति के अनुरूप, दोनों व्यक्ति खूबसूरत स्वर्ण पारदर्शी वस्त्र पहने हैं, और शानदार रत्नों से सजे हैं। स्वर्ण के प्रयोग की अधिकता और बेहतरीन कारीगरी यह बताती है कि राजपूत राजाओं द्वारा, जैसे मिर्जा राजा जय सिंह प्रथम ने, इन चित्रकलाओं को प्रचुर संरक्षण प्रदान किया गया।[8]

यह दोहरा चित्र, जिसकी ऊपर व्याख्या की गई है, क्षेत्रीय शासकों को उच्च–मुगल–शैली की चित्रकला का अनोखा उदाहरण है। अधिकांश मामलों में राजपूत दरबारों में चित्रकार विभिन्न स्तरों पर मुगल आदर्शों को समाहित कर लेते थे। मारवाड़ के राजा महाराजा जसवंत सिंह (1638–78) के चित्र की शारीरिक संरचना मुगल संरचना का उदाहरण लगती थी।[9] चित्रकारों का तकनीकी कौशल चेहरे को आकार देने और छाया दिखाने के लिये नक्कासी के कार्य में देखा जा सकता है। कान के भीतर की लाइनों को रूप दिया जाना, मूछों के घुमाव और कमल के फूल के पत्रों के आकार की आखों का निर्धारण कल्पना, शैली के विविध प्रकारों की खूबसूरती दिखाता है।

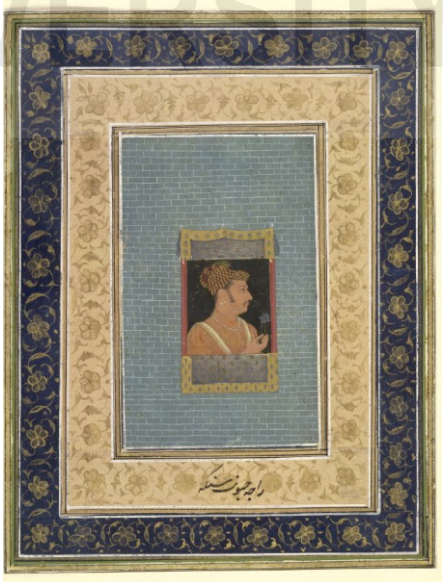

चित्र-3: मारवाड़ के महाराजा जसवंत सिंह, ca. 1655, © The Trustees of the British Museum 1920,0917,0.77

[8] Catherine Glynn & Ellen Smart, "A Mughal icon re-examined", *ArtibusAsiae*, Vol 57, No. 1/2 (1997), pp. 5-15.

[9] For a portrait of Maharaja Jaswant Singh made by the Mughal artist.

कौशल की कमी की जगह, कला इतिहासकारों ने यह समझ बनाई कि राजपूताना दरबारों में चित्रकारी में मुगल शैली का सम्पूर्णता से नहीं बल्कि चुन चुन कर प्रयोग किया गया। राजाओं के चित्र यह स्पष्ट करने के लिये बने कि व्यक्ति की बाहरी बनावट की अपेक्षा उसके व्यक्तित्व की खूबसूरती को सराहा जाय, समझा जाय।[10] शासक के नखशिख का प्रदर्शन देवताओं के स्वरूप की तरह किया गया। राजपूत चित्रकारों ने 'लक्षणों' पर जोर दिया या चक्रवर्ती राजाओं के संज्ञानात्मक गुणों को, जिनका उल्लेख नगनाजीत की पुस्तक 'चित्रलक्षण' में देवी–देवताओं के वर्णन में दिखाया गया है, परिलक्षित किया गया। उदाहरण के लिये,चक्रवर्ती राजा की आंखें बांस से बने धनुष की तरह दिखाई गई। इस तरह की काव्यात्मक अतिरेक की स्थिति 17वी और 18वी सदी में काफी लोकप्रिय थीं।[11] इस प्रकार के गुणात्मक विशिष्टता किये चित्र राजपूत राजाओं के पद और सम्मान को अभिव्यक्त करने के लिये चित्रकारों ने तैयार किये।

राजाओं/शासकों के एकल चित्र के साथ–साथ, राजपूत चित्रकारों ने ऐसे स्थिति विशेष से संबंधित चित्र भी बनाये, जिसमें राजाओं को दरबार में सभ्रांतों के साथ, त्यौहार मनाते हुए, संगीत सुनते हुए, नृत्य कला का आनंद लेते हुए या महिलाओं के साथ समय बिताते हुए दिखाया गया। इस प्रकार के चित्रों को, जिसमें दरबार में आनंद उठाते हुए राजाओं का चित्रण था, उनको 18वीं शताब्दी में यह स्पष्ट करने के लिये प्रयोग किया गया कि किस प्रकार राजपूत राजशाही का पतन हो रहा था। प्राच्यविदों के इस दृष्टिकोण के चुनौती देते हुए दीप्ति खेड़ा मेवाड़ के राजाओं के संरक्षण में तैयार इन चित्रों के संदर्भ में कहती हैं कि इन चित्रों को बौद्धिक और शुद्ध सौंदर्य के वातावरण में देखा जाना चाहिये। वह अपना पक्ष अकाट्य तर्क के साथ रखती हैं कि इन चित्रों को उन ऐतिहासिक दस्तावेजों/अभिलेखों के साथ रखकर विचार में लाना चाहिये जहाँ राजदरबारों का वर्णन किया गया है। खेड़ा स्पष्ट कहती हैं कि राजाओं के शिष्टाचार की नियमावली स्पष्ट करती है कि राजा कलाओं के रसिक होते हैं। राजाओं में आदर्श व्यवहार माना जाता है कि वे भौतिक सुखों में रुचि ले मद्यपान, खुशुबुओं, फूल–मालाओं (गजरे) और आभूषणों का उपयोग करें। महाराणा जगत सिंह द्वितीय (1734–51), उदयपुर के शासक, दरबार के संभ्रातों के साथ जल–विहार करते थे।

---

[10] B.N. Goswamy, "Essence and appearance: some note on Indian Portraiture" in Robert Skelton (ed.) *Facets of Indian Art* (Victoria and Albert Museum, London, 1986), 193.
Desai elaborates how Mughal darbar scenes were adapted at Rajput courts. While both were formal compositions, they expressed court hierarchy in different manners. In the Mughal *darbar* hierarchy was established by the degree of distance of an individual from the Emperor, with the imperial princes standing closest to him. Only the Emperor had the prerogative to be seated, and the highest nobles were allowed to lean on a stick. In the Mewar court, the closest members of the family were placed at the cardinal points of a square. The king was shown seated among equals, while being distinguished as the head through symbols like the shield, flywhisk and *huqqa*. The only figures that standing were the attendants, servants and musicians. This reflects the larger political context of Rajput kingship where the ruler acknowledges the support and power of his clansmen.See Vishakha N. Desai, "Timeless Symbols: Royal Portraits from Rajasthan 17th to 19thcentury", in Karine Schomer (ed.), *The Idea of Rajasthan: Explorations in Regional Identity, Vol.1* (Manohar and AIIS, 1994): 316-342.

[11] Aitken, *The Intelligence of Tradition*, 25-26.

चित्र-4: जय राम द्वारा महाराणा जगत सिंह द्वितीय पैलेस पूल में खिलखिलाते हुए, ca. 1746-50,©The San Diego Museum of Art, Edwin Binnery 3rd Collection, 1990.624.

जब सब आपस में जल क्रीड़ा करते, तो उनकी मानसिक स्थिति शान्त और निश्चिंत हो जाती। कुछ हाथों को दोनों ओर फैलाकर तैरते, कुछ जल में नीचे की ओर चले जाते। जबकि कुछ संभ्रान्त जन तालाब के किनारे फुरसत में बैठकर समय बिताते और अपने पैरों को जल में डुबाकर ठंडे पानी का आनन्द लेते। पूरा वातावरण बड़ी तादाद में चाकरों द्वारा खुशबूदार मसालों के साथ बने व्यंजनों के कारण और मादक बन जाता। अनौपचारिक चित्रों में, जैसे कि जग–विलास महल में जगत सिंह जी की है, जिसमें राजा और उनके दरबारी सभ्रान्त लोगों के बीच सामूहिक स्तर पर जुड़ाव को प्रदर्शित किया गया है। दरबारी नन्दराम की एक समकालीन कविता 'जग विलास' 1746 में बने नये जल–महल 'जगनिवास' के उद्घाटन के अवसर का वर्णन करती है।[12] कवि ऐसे जल–विहार की एक उत्तेजनात्मक दृष्टि से बने माहौल का विवरण उपलब्ध कराता है।

"मछली, बकरे, हिरन से बने अभिभूत करने वाले व्यंजन और चावल व मसूर से बनी खिचड़ी तथा मिसरी पड़ी हुई छाछ की महक से शारीरिक इंद्रियों को जो संतोष मिलता है और गुलाब जो सारे परिसरों में फैले रहते हैं।"[13]

एक अन्य कविता में नन्दराम कहते हैं– दिलखुश महल और खुश महल जैसे बगीचों–परिसरों में जो बहुतायत में हैं, शासक आनन्द से राज करते है (सुख सो राजतराना) यह वह जगह होती है जहाँ वह स्वयं और उसके सहयोगी आनन्द के सागर में डूबे रहते हैं ('सभी संग सुख में तह–सुखों सागरा पाया)।[14] ऐसे विवरण दरबारी चित्रकला में एक भिन्न प्रकार के अध्ययन का अवसर प्रदान करते हैं। ऐसे जमावड़ों में राजा और उसके दरबारी जनों के बीच मजबूत भावनात्मक संबंध बनते हैं, जिनको चित्रकला के आधार पर स्थायी बना दिया जाता है।[15]

[12] Dipti Khera, "Jagvilasa: Picturing Worlds of Pleasure and Power in 18th-Century Udaipur Painting", in Aitken (ed.) *A Magic World,*74.
[13]Ibid., 82.
[14] Ibid.
[15] Ibid., 83.

राजपूतों द्वारा मुगल–शैली का आकृति चित्रांकन और दरबारी दृश्यों के चित्रांकन के लिये उपयोग किया गया, किन्तु महाकाव्यों, रूमानी और धार्मिक चित्रांकन में मुगल–शैली के वास्तविक जहान को चित्रित करने की परंपरा में रूचि नहीं दिखायी। एक चित्रशाला में, जैसीकि जोधपुर या आमेर में हैं, शैलीगत विरोध भी देखा गया है।[16] उदाहरण के लिये, विद्वान बताते है कि जोधपुर में 1650–60 के दशक में, लगभग उसी समय, जब मारवाड़ के महाराजा जसवंत सिंह का चित्र बनाया गया था, रागमाला चित्रों की बड़ी श्रृंखला शुद्ध राजपूत शैली में बनाये गये थे। एक जनप्रिय श्रेणी की चित्रकला, रागमाला शाब्दिक रूप से 'रागों की माला', संगीत की विधियों को चित्रित करते हुए दिखाये जाने की है, जिससे प्रत्येक राग को एक नायक या नायिका की तरह आकार दिया गया और एक कथा की तरह दिखाया गया।

चित्र-5: सोरथिरागिनी, रागमाला श्रृंखला से फोलियो, ca. 1650, © The Trustees of the British Museum, 1955, 1008,0.37.

[16] Aitken, *The Intelligence of Tradition*, 24-25.

सांसारिक रंगों में रंगी हुई 'सोराथिरंगिनी' की संगीत की बुनावट प्रेमियों को गहरी रात में देखने की कल्पना करती है। संगमरमर से बने मंडप की लाल रंग की पृष्ठभूमि उनके जुनून का प्रतीक है। आकृति को गढ़ने और वर्गीकृत करने के लिये रंगों और वास्तुकला का उपयोग किया गया। मुख्य मंडप से दूर एक महिला सारंगी वादक साज बजाती है। कोई योजना विशेष दिखाई नहीं देती, रंगों का प्रयोग भी सतही तौर पर होता है।[17]

मौली एटकन बीकानेर की चित्रशाला का उदाहरण रखते हैं, जिसके चित्र यह स्पष्ट दिखाते हैं कि जब चित्रकार मुगल शैली व परम्पराओं को भलीभाँति समझते थे, उन्होंने महाकाव्यों और वर्णनात्मक विषयों को शैलीगत विभिन्नता के साथ चुना और पसंद किया। यह इसलिये था कि काव्यात्मक कल्पना सांसारिक वास्तविकताओं से भिन्न होती है और एक सहजीकरण की योजना की आवश्यकता होती है। अभिलेखों से प्रमाणित होता है, कि दिल्ली के एक चित्रकार अली रजा को बीकानेर के राजा करण सिंह (1631–1669) ने वर्ष 1694 में लक्ष्मी–नारायण की पूर्ति बनाने के लिये बुलवाया था।[18] राजपूतों की पसंदगी के आधारों पर, अली रजा ने क्षैतिजीय प्रारूप का चुनाव किया। वास्तुकलात्मक स्तंभों और विपरीत रंगों का प्रयोग कर देवी–देवताओं के आकार केन्द्र में बनाये जाते थे। उसकी कला की और विशेषतायें जिनमें महिलाओं के शारीरिक स्वरूप को नाजुक दिखाते हुए, उनके वस्त्र को सावधानीपूर्वक सजाकर रखने की कला, उनकी मुगल शैली को प्रदर्शित करती है।[19]

सत्रहवीं शताब्दी के अन्तिम वर्षों में केदार रागिनी के चित्र में, बीकानेरी कलाकार, रूकुनूद्दीन ने दो साधुओं को एक पेड़ के नीचे दिखाया–एक ध्यान में मग्न और दूसरा रूद्रवीणा बजाते हुए। रूकनूद्दीन ने मुगल तकनीक का उपयोग किया है। वह जंगल की हरी पत्तियों के समक्ष पेड़ को गहराई देते हुए पत्तियों को हल्के हरे–रंग में रखते हैं और इसे पृष्ठभूमि के रूप में उपयोग करते हैं। आकृतियाँ बड़ी सावधनी से उकेरी गई हैं, और नाजुक कूंची के काम से चित्र को शान्तिपूर्ण सुन्दरता प्रदान की गई है। इसी के साथ, रूकनूद्दीन ने राजस्थानी व्यवहार (शैली) को भी चित्रकारी में लिया है। पेड़ की प्रत्येक पत्ती को सावधानीपूर्वक चित्रित किया गया है, और उनको सुन्दरता से गुच्छों में दिखाया गया है। साधु पशु–चर्म में बैठते हैं तो ऐसे लगता है कि हवा में तैर रहे हों। वृक्ष का सबसे उपरी भाग रात्रि के आकाश तक जाता है जो सूक्ष्म रूप से चमकते तारों के साथ है।[20]

चित्र-6: केदाररागिनी: एक रागमाला श्रृंखला से फोलियो (संगीत मोड की माला), रुक्नुद्दीन द्वारा, ca. 1690-95, Metropolitan Museum of Art, Gift of Mr. and Mrs. Peter Findlay, 1978.540.2.

[17]For more examples of this stylistic contrast at Jodhpur see Rosemary Crill, *Marwar Painting: A History of the Jodhpur Style* (Mumbai: India Book House, 2000). For a similar trajectory at Amber see Asok Kumar Das, "Court Painting for the Amber Ruler, circa 1590-1727" in Andrew Topsfield (ed.) *Court Painting in Rajasthan* (Mumbai: Marg Publications, 2000), 41-56.

[18] For an illustration of this painting see Aitken, *Intelligence of Tradition*, Fig 1.6, p. 27.

[19] Ibid., 27-28.

[20]Aitken,*The Intelligence of Tradition,* p. 33-35.

राजपूत संरक्षण में बनी चित्रकला की शुरुआती श्रृंखला में लिखा गया है कि राजपूत मुखिया मुगल चित्रकला की शैली में पारंगत चित्रकारों को कार्य में लगाते थे, जो राजस्थान में दरबार की चित्रशाला की स्थापना करने में मुख्य संवाहक थे। 1591 में, बूंदी के राव भोज सिंह हाडा ने वाराणसी के बाहरी क्षेत्र, चुनार मे एक रागमाला की स्वीकृति दी।

चित्र-7: भैरव राग, 1591. Collection Victoria & Albert Museum, IS.40-1981 Source: Wikimedia Commons

1575 में भोज सिहं जी के पिताजी राव सुरजन सिंह हाडा को (1554–85) उस क्षेत्र का राज्यपाल नियुक्त किया गया था। रागमाला के एक चित्र में कहा गया है कि श्रृंखला का चित्रांकन शेख हुसैन, शेख अली, और शेख हातिम ने तैयार किया। ये सब फारसी गुरु मीर सैय्यद अली, और ख्वाजा अब्द अल–समद के शिष्य थे। जो हुमांयू के दरबार सफाविद से लाये गये थे और अकबर के मातहत मुगल चित्रशाला के प्रमुख पदों पर थे।[21] चित्रकारों का मुगल शैली मे अभ्यास ''फैले हुए फलक पर वास्तुशिल्प में, सूक्ष्मतम ध्यान से बनाये गये सजावटी आकार या आकृतियाँ और इस प्रकार बनाई गई मानव आकृतियाँ कि उनमें वजन

[21] The inscription reads, "He is God – exalted be He. The book *Ragmala* has been prepared on Wednesday at noon in the locality of Chunar. The work of the pupils of Mir Sayyid Ali NadirulmulkHumayunshahi and Khwaja 'Abd al-Samad Shirin-Qalam the slaves Shaykh Husayn and Shaykh Ali and Shaykh Hatim son of Shaykh PhulChuisti. Written on the 29th of Rabi' II of the year 999 [Feb.24, 1591]. Written by the humble Daud son of Sayyid [illegible]." Wheeler M. Thackston in Milo C. Beach, "The Masters of the Chunar*Ragamala* and the Hada Master", *Master of Indian Painting* Vol. I (ArtibusAsiae Publishers, 2011), 292.

और शारीरिक स्थूलता दिखाई दे'' मे दिखा।[22] इस्लामिक पुस्तकों की तरह इनको ऊर्ध्वगामी बनाया गया और चौड़ाई देने के लिये, गहराई के लिये विकर्ण रेखाओं में दिखाया गया। भू–तल के विभिन्न आकार, दीवारों के स्वरूप, ब्लाक छपाई वाले परिधान लटकते हुए दिखाई देते हैं। चुनार रागमाला सभी रागमाला चित्रों के लिये पथ–प्रदर्शक सिद्धान्त बनी रही। अगली तीन शताब्दियों तक बूदीं में निर्मित चित्रों की मार्गदर्शक रही।

बूंदी में भोज सिंह के महल की दीवारों पर टंगी चित्रों की बनावट बताती है कि एक से अधिक ऐसे चित्रकार हाड़ाओं के साथ चुनार से बूंदी आये।[23] चुनार रागमाला के गुरुओं के साये में, स्थानीय कलाकार काम पर लिये गये, और बूंदी में एक चित्रशाला की स्थापना हुई। एक बूंदी कलाकार, जिसको कला–इतिहासकारों के द्वारा हाड मास्टर कहा गया, शिकार सम्बन्धी और हाथियों से युद्ध के चित्र बनाने में विशेषज्ञता प्राप्त कर सके। (चित्र-8).

चित्र-8: एक हाथी का मुकाबला, बुंदिक में हाडा मास्टर को जिम्मेदार ठहराया, ca. 1610-20, © Philadelphia Museum of Art, 125th Anniversary Acquisition. Alvin O. Bellak Collection, 2004-149-61.

हाथी के शरीर की शारीरिक विशेषताओं पर मेहनत करने के बजाय वे उसके वजन और चमड़ी को छोड़कर उसकी फुर्ती और ऊर्जा को सामने लाना उपयुक्त समझते थे। हाथियों के चारों ओर सजीव लगने वाली आकृतियाँ चित्र की नाटकीय छवि को बढ़ाते थे। 1631 में, जब बूंदी का एक भाग कोटा राज्य के रूप में स्वतंत्र स्थापित किया गया, कहा जाता है कि हाड़ा मास्टर (गुरु) भी नये राज्य में चले आये। एक प्रतिद्वन्द्वी कार्यशाला यहाँ स्थापित की गई, जो उन्नीसवीं शताब्दी तक निरन्तर फलती फूलती रही। हाड़ा गुरु के कार्य के अन्तिम वर्षों में मानव आकृति की रचना बहुत ही जटिल और सटीक हो गई थी।[24]

चित्र-9: दो हाथी की लड़ाई, कोटा में हाड़ा मास्टर को जिम्मेदार ठहराया, ca. 1655, Collection of Howard Hodgkin. Source: Wikimedia Commons

[22] Ibid., 294.
[23] Ibid., 296.
[24] Ibid., 300-303.

कोटा चित्रशाला में शिकार करते हुए दृश्य सर्वप्रथम 1690 में बनाये गये जो अपने परिदृश्य के अभिनव स्वरूप के लिये सराहे जाते थे। (चित्र-10 'माधो सिंह जंगली सुअर का शिकार करते हुए)। पूर्ण हरियाली के चित्र कई तकनीकों के प्रयोग से बनते थे। भारतीय चित्रकला में असामान्य था कि पृष्ठभूमि में मैदान भी दिखाई दे। चित्र रौशनी का प्रयोग भी करता था, घने जंगल के दृश्य के लिये घने पारदर्शी पत्तों का प्रयोग किया जाता था।[25] शिकार करने की मानव–मन की उत्सुकता को प्रदर्शित करने के लिये चित्र में कोटा के शासक माधो सिंह जी को आगे की ओर झपटते हुए दिखाया गया है। माधो सिंह के परिचारक वर्ग के दो व्यक्तियों को पेड़ के तने के पीछे छिपते हुए दिखाया गया है।[26]

चित्र-10: माधो सिंह जंगली सूअर का शिकार, ca. 1720, Collection of Howard Hodgkin.
Source: http://jameelcentre.ashmolean.org/object/L1118.79

कोटा में चित्रकला का अगला चरण, राजनीति, धर्म और उनका चित्रकला से संबंध का रहा। शासकों की मनोविनोद के चित्र या दरबार लगाते हुए राजकीय कार्य करते चित्र राजा की राजनैतिक शक्ति की मजबूती दिखाते हैं। इसी प्रकार, हिन्दू देवी देवताओं के धार्मिक चित्र की भी उपस्थिति और महाभारत, रामायण, भागवत पुराण और गीत–गाविन्द से संबंधित चित्रित हस्तलेखों का शाही संग्रहालय में रखा जाना, राजाओं की उच्च आध्यात्मिकता का प्रतीक बन जाता है। ये दिखाते हैं कि राजा धार्मिक विश्वास में भक्ति और उसकी रक्षा करने वाले संरक्षक थे।[27] समय–समय पर, राजपूत संरक्षकों ने धार्मिक चित्रों में पवित्रता के साथ सम्बद्ध और राजा के शासन की सर्वोच्चता दिखायी।

[25] Milo C. Beach, "Masters of Early Kota Painting" in Beach, Fisher & Goswamy eds. *Masters of Indian Painting*, Vol. II, 466-469.

[26] To understand how similar hunt scenes continued to be painted for Kota rulers till the end of the eighteenth century see "The Lion Hunt of MaharaoUmed Singh of Kota" by ChateriGumani, dated 1779, Williams College Museum of Art, purchase, Vaccariello Fund and Karl E. Weston Memorial Fund 83.6, http://egallery.williams.edu/objects/8386/the-lion-hunt-of-maharao-umed-singh-of-kota (Retrieved on 2 January, 2019).

[27] Joan Cummins, *Indian Painting:From Cave Temples to the Colonial Period* (Boston: Museum of Fine Arts Publications, 2006) 162.

औरंगजेब की मृत्यु के बाद के वर्षों में कोटा की मुगल राजसत्ता से सम्बन्ध और इसके पैतृक राज्य बूंदी की स्थिति उतार–चढ़ाव भरी रही। पड़ौसी राजघरानों ने मुगल तख्त के साथ प्रतिद्वन्द्वी दावेदारों का सहयोग किया। जहाँ बूंदी ने भावी मुगल शासक बहादुर शाह का सहयोग किया, वहीं कोटा के राव राजाओं ने युवराज आजम शाह का। जब बहादुर शाह मुगल राजगद्दी पर बैठे, तो उन्होंने बूंदी को उपहार में कोटा की सभी जमीने दे दीं और कोटा को दंड दिया। 1713 में जब अगला बादशाह मुगल तख्त पर बैठा (फारुख सियर 1713–19) तो उसने बूंदी को कोटा के राजा भीम सिंह को दे दिया (1701–1720) इसके साथ ही उनको महाराव की पदवी भी दी। यद्यपि दो साल बाद फारुख सियर ने बूंदी को अपने पास रख किया। 1720 में कोटा ने बंदी को अपने मिला लिया, और 5 सालों तक इसको अपने नियंत्रण में रखा।[28]

मुगल शासकों की बनती बिगड़ती स्थिति एक प्रकार से मुगल शासन की कमजोर होती पकड़ का संकेत दे रही थी। उस क्षेत्र के अन्य राजघरानों की तरह कोटा ने शाही केन्द्र को सम्मान दिया और उसके साथ बने रहे, परंतु स्वयं को कृष्ण–भक्ति के वल्लभ सम्प्रदाय के साथ जोड़ लिया, जो राजस्थान में अठारहवीं शताब्दी में सबसे प्रभावशाली सम्प्रदाय था।[29] 1719 में, वल्लभ सम्प्रदाय के नौ स्वरूपों में से एक, जिसे ब्रजनाथ जी कहा जाता था, को कोटा का मुख्य संरक्षक देवता मान लिया गया। वल्लभ संप्रदाय के संस्थापक, वल्लभाचार्य की आरंभिक सीखों में ''शुद्धअद्वैत'' प्रथक था, जिसके अनुसार ईश्वर के अस्तित्व से बाहर कुछ नहीं है। इस संबंध में इसे कृष्णा समझा जाये। इसका अर्थ यह हुआ कि यह भौतिकवादी संसार का स्वरूप भी ईश्वर का ही भाग है, और यह उनके लिये संभव है कि वे दोनों सह–अस्तित्व बनाये रहें। इस दर्शन के कारण मनुष्यों की दुनिया में देवताओं को स्थान मिला या देवताओं के मध्य मनुष्य को, जिसका संदर्भ चित्रों में अक्सर होता रहा। सन् 1720 से, कोटा के चित्रकारों ने ब्रजनाथ जी को दरबारी परिवेश में, राजाओं के साथ मिलाना और दिखाना शुरू कर दिया।[30]

चित्र 11 में राव अर्जुन सिंह (1720–23) ब्रजनाथ जी को गुलाब वाटिका में पूजते रहे। चित्र निर्माण के केन्द्र में, एक जगह जो कि राजा के लिए सुरक्षित होती थी, सामान्यता, वह ब्रजनाथ जी के लिये थी। गुलाब के फूलों से सजी छतरी में ब्रजनाथ जी अर्जुन सिंह को एक फूलों की माला देते हैं। शक्ति के गलियारों में, ब्रजनाथ जी को अर्जुन सिंह से उच्च पद प्राप्त था।

चित्र-11: राव अर्जुन सिंह रोज गार्डन, कोटा में श्री बृजनाथजी की पूजा करते हुए, ca. 1720-25, British Library, Add.Or.5722. Image in Public Domain. Source: https//blogs.bl.uk/asian-and-african/2013/06recent-acuuisition-rao-arjun-singh-of-kotah.html.

[28] Beach, "Masters of Early Kota Painting", 470.

[29] Paintings had a significant place in the Vallabh Samparadaya. The sect's founder, Vallabhacharya had declared that just as idols were icons of worship, paintings could also serve as a medium of divinity. According to Woodman Taylor, this adds a functional dimension to paintings beyond their aesthetic merit. Taylor points out that in Kota along with paintings of deities, genealogical portraits of the dyansty's ruler are also worshipped during Dushhera and other religious festivals. Woodman Taylor, "Picture Practice: Painting Programs, Manuscript Production and Liturgical Performances at the Kotah Royal Palace", in Welch (ed.) *Gods, Kings and Tigers*, pp. 61-72.

[30] See *Sri Brijnathji hunting at Makundgarh,* attributed to the Kota Master, c. 1715, Collection of Gursharan S. and Elvira Sidhu. https://www.metmuseum.org/art/collection/search/76219 (Retrieved 5 January, 2019).

फिर भी चित्रकार अपने संरक्षक का सम्मान करता है, उनके दो चित्र बनाकर – एक में वह ब्रजनाथ जी के पैरों पर श्रद्धा से नमन करते हुए, दूसरे में मोरपंख से बने पंखे से सेवा में लगे एक सेवक की तरह (मोरछाल)। चित्रकार ब्रजनाथ जी और अर्जुन सिंह के बीच के अन्तर को भी समाप्त कर देता है, जो लौकिक और ईश्वरीय शक्ति के बीच होता है, जिसमें उनके शारीरिक बनावट का स्वरूप एक सा ही दिखाया गया। दोनों को चौड़े माथे वाला, धनुषकार भौंह, और लम्बी, तीव्र और नुकीली नाक वाला दिखाया गया है।[31] इसी प्रकार तीनों की आकृतियों के मुख मण्डल के चारों ओर मोती के रंग की सफेद प्रमामण्डल की ज्योति चित्रित रहती थी।[32]

ब्रिजनाथ जी और राव अर्जुन सिंह का सम्मिश्रण चित्रकला में सर्वत्र दिखाई देता है। चित्र 11 को चित्र 12 से तुलना करें, जिसमें राव अर्जुन सिंह को एक अश्व की जाँच करते दिखाया गया है। चित्रकार कोटा के राजा की लौकिक तस्वीर और संरक्षक देवता को चित्रित करने की बनावट एक समान रखते थे।

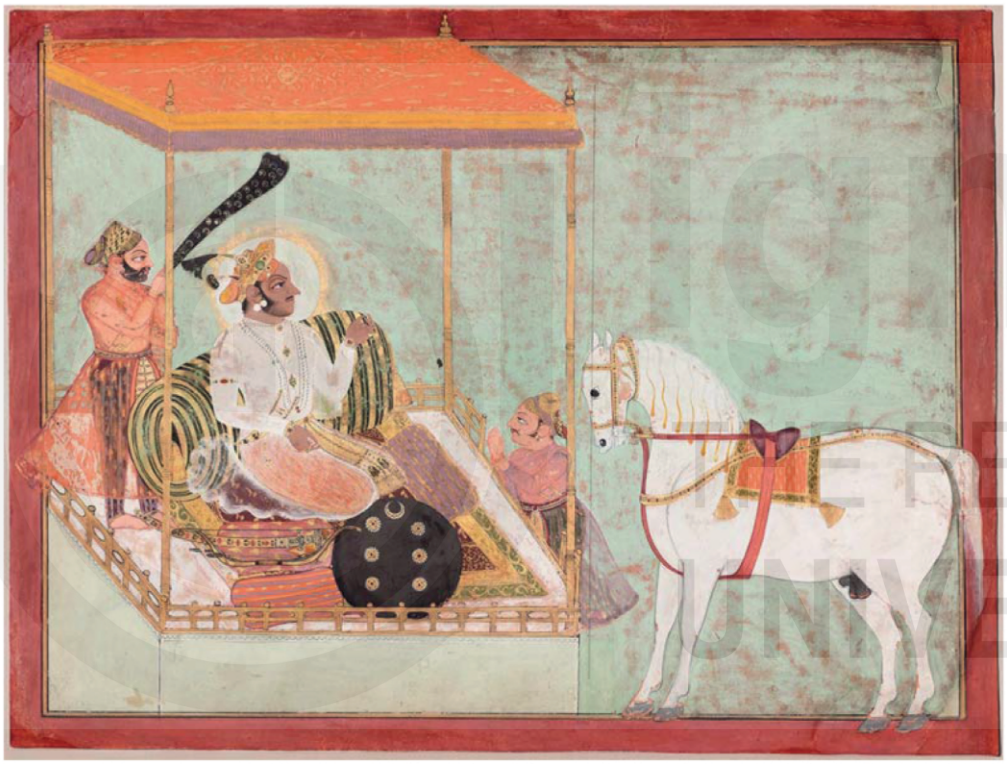

चित्र-12: घोड़े को निहारते हुए कोटा के राव अर्जुन सिंह, ca. 1720, Museum of Fine Arts Boston, Gift of John Goelet, 66.147.

चित्र 12 में अर्जुन सिंह सोने की कशीदाकारी से लदी एक चंदवी के नीचे एक पदस्थल पर बैठे हैं। पूर्व के चित्रों में समान ही ब्रिजनाथ जी की सेवा में एक परिचारक सेवा दे रहा है, जो मोरछाल से पीछे से पंखा झल रहे हैं। एक अन्य व्यक्ति हाथ जोड़ कर अर्जुन सिंह के सामने झुककर खड़ा हुआ है। मौली एटकिन ने कहा है कि अन्त में, कृष्ण और राजपूत की एक सी पहचान इतनी विस्तृत थी कि वे एक दूसरे के समान लगते थे जैसे शीशे के महल में बिना किसी रोक या सीमा के स्पष्ट दिखाता है, ताकि कदाचित लगभग जान बूझकर राजा

[31] Molly Aitken, *The Intelligence of Tradition in Rajput Court Painting* (New Haven and London: Yale University Press, 2010), 251.

[32] For a similar composition which pictures Maharao Bhim Singh and his son Arjun Singh with Brijnathji see *Maharao Bhim Singh of Kota Attending Krishna as Brijnathji*, attributed to the Kota Master, c. 1719-20, Philadelphia Museum of Art, Gift of Stuart Cary Welch, Jr. in memory of William P. Wood, 1997, No. 1997-25-1, https://www.philamuseum.org/collections/634-549.html#object/91404 (Retrieved 10 January, 2019).

को कृष्ण की तरह दिखाता है, ताकि चित्र देखने वाले राजा को ईश्वरीय रूप में देख सके, भक्ति पूर्ण और एक देवता के रूप में साथ–साथ।[33]

राजस्थान के अन्य राजघरानों ने भी अपनी समीपता वल्लभ सम्प्रदाय के साथ घोषित कर दी, और यह सामीप्यता दरबारी चित्रकलाओं में भी परिलक्षित होने लगी। कृष्ण की राजपूत राजाओं से एकनिष्ठता बार–बार दिखने लगी। सवाई जय सिंह (1699–1743) के शासन के दौरान, जयपुर में महल से सटे हवेलीनुमा मंदिर में गोविन्द देव जी की मूर्ति की स्थापना हुई।[34] किशनगढ़ में महाराजा रूप सिंह (1629–43) ने अपने राजघराने को श्री कल्याण राय, जी के नाम पर उन को सौंप दिया, जो सम्प्रदाय के प्रमुख प्रतीकों में से एक थे।[35] उनके पुत्र सावंत सिंह, किशनगढ़ के युवराज, ने तथा उनकी सहचरी ने कृष्ण और राधा के भक्तिपूर्ण भजन तैयार किये, जिनका उपनाम क्रमशः नागरीदास और रसिक बिहारी रखा गया। कृष्ण की कथाओं और नागरीदास जी के व्यक्तित्व का आपसी सम्बन्ध संबंधित काव्य और चित्रों में डाला गया। किशनगढ़ दरबार के चित्रकार निहाल चन्द ने सावन्त सिंह और उनकी सहचरी को अपने चित्रों में राधा–कृष्ण की तरह अलौकिक जोड़े के रूप में (जिसे लोक प्रियनाम बनीठनी दिया गया था) दिखाकर अमरता प्रदान कर दी। सावन्त सिंह के चित्र (चित्र 13) की राधा और कृष्ण युगल जोड़े से (चित्र 14) और राधा कृष्ण प्रेम की नैया में (चित्र 15) की तुलना करने पर पता चल जाता है।

ग्रामीण छवि वाले भगवान के चित्रों से और भव्य सावन्त सिंह के चित्रों से यह चरितार्थ हो जाता है, कि वे एक दूसरे के लिये उदाहरण स्वरूप हैं। आकृति की बनावट में लम्बे और पतले और उपर की ओर मोड़ लेती विशेषता लिये हुए अर्ध–खुली आँखों का दिखाया जाना। सभी चित्रों में, आकृतियों को सुन्दर कपड़े पहनाये हुए व उनमें मूल्यवान रत्नों से किया गया श्रृंगार दिखाया जाता था। प्रेम की नैया में कृष्ण और राधा, ब्रज के बगीचों में किशनगढ़ के परिदृश्य को दरबारी स्वरूप से बदलकर झील के किनारे के तटबन्ध और उनमें सुयोजित बाग बगीचे तथा संगमरमर के मंडप में परिवर्तित कर दिया।[36]

चित्र-13: किशनगढ़ के महाराजा कुमार सावंत सिंह का पोर्ट्रेट, 1745, Harvard Art Museums/Arthur M. Sackler Museum, Gift in gratitude to John Coolidge, Gift of Leslie Cheek, Jr. Anonymous Fund in Memory of Henry Berg, Louise Haskell Daly, Alpheus Hyatt, Richard Norton Memorial Funds and through the generosity of Albert H. Gordon and Emily Rauh Pulitzer; formerly in the collection of Sturart Cary Welch, Jr., 1995.114. Source: https://hvrd.art/o/310428

[33] Ibid.

[34] In the kingdom of Jodhpur Maharaja Vijai Singh (r. 1752-53 & 1772-93) was initiated in the Vallabh Sampradaya in 1765. He commissioned an illustrated *Bhagavata Purana*, *Krishna-lila* and paintings from him reign capture him at worship. When Maharaja Man Singh came to the throne in 1803, he pledged his allegiance to the Nath Sampradaya and credited his accession to the intervention of the immortal Nath yogi, Jallandarnath. Painting after painting pledges Man Singh's devotion to the Naths and Jodhpur paintings from the beginning of the nineteenth century become exponents of Nath philosophy. See Debra Diamond, Catherine Glynn, Karni Singh Jasol, *Garden & Cosmos: The Royal Paintings of Jodhpur* (Washington DC, Freer Gallery of Art and the Arthur M. Sackler Gallery, 2008).

[35] Ibid., 248.

[36] For high resolution zoomable image of this painting see https://artsandculture.google.com/asset/radha-and-krishna-in-the-boat-of-love/FgEEOnrrqsn9OA (Retrieved 15 January, 2019).

चित्र-14: कृष्ण और राधा, किशनगढ़, c. 1750 c. 1750 © Philadelphia Museum of Art, Purchased with the Edith H. Bell Fund, 1984-72-1

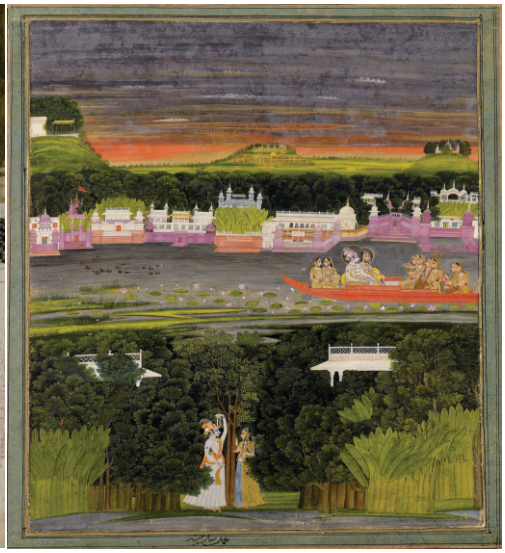

चित्र-15: प्रेम की नाव में राधा और कृष्ण, निहालचंद, 1755, National Museum New Delhi. Source: Wikimedia Commons

आश्चर्यजनक रूप से, जबकि हम मध्य सत्रहवीं शताब्दी से 19वीं शताब्दी तक कोटा चित्रशालाओं की कार्यवाहियों की गति का अंदाज ले सकते हैं, हम उन लोगों के बारे में बहुत कम जानकारी पाते हैं जिन्होंने इन कला–चित्रों को बनाया। चित्रों में दिये गये अंकन से केवल कुछ ही कोटा के चित्रकारों का नाम सामने आ पाता है जैसे शेख ताजू, गुमानी और नीजू। अधिकतर मामलों में कला इतिहासकारों ने इनको छद्म नाम ही दिया है। यह चुनौती केवल कोटा के लिये ही नहीं है, बल्कि भारतीय चित्र कला के अध्ययन में सामान्य रूप से रही है। बहुत कम अभिलेख भारतीय चित्रकला से सीधे जुड़े है। यह चित्रों के लिये सामान्य बात नहीं है कि उनमें उनके निर्माण की तिथि या स्थान भी पुष्पिका दी गई हो। यहाँ तक कि जब चित्रकारों के नाम एकत्रित किये गये उनके जीवन सम्बन्धी कोई विवरण उपलब्ध नहीं हो सके। ज्यादा सूचनायें उनके सरंक्षकों के बारे में उपलब्ध हैं, इसीलिये भारतीय चित्रकला के बारे में पारस्परिक लेखों में उनके संरक्षकों, जो अधिकतर राजा हुआ करते थे, के बारे में ही बताया गया है। चित्रशालाओं की गतिविधियों के बारे में तो कुछ भी ज्ञात नहीं है। चित्रशालाओं की रोज–रोज की गतिविधियाँ, चित्रकारों की जिन्दगी के बारे में, और उन जगहों पर जहाँ चित्रकारी की जाती थी, दरबार के संस्कार, ऐसे कुछ विषय हैं जिनमें अभी शोध किया जाना आवश्यक है। हमारे शोध में जो खालीपन है इसे भरने के लिये कुछ, विद्वानों ने कुछ अपरंपरागत कला इतिहास के स्रोतों का भी सहारा लिया है जैसे धार्मिक स्थलों/तीर्थ स्थलों पर रखे गये दस्तावेज और प्रशासनिक और ऐतिहासिक अभिलेखों में संबंधित सूचना की तलाश करना।

बोध प्रश्न 1

1. राजस्थान के शाही घरानों में मुगल शैली की चित्रकला किस प्रकार ले जाई गई?

.....

.....

.....

.....

2. बूंदी और कोटा राज्यों में चित्रकारिता को मिले संरक्षण पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

.....

.....

.....

.....

15.3 पहाड़ी चित्रकला–पंजाब के पर्वतीय क्षेत्र

पहाड़ी क्षेत्र में चित्रकला के अध्ययन के लिये, बी.एन. गोस्वामी अपना ध्यान सरंक्षक से हटाकर चित्रकार पर लाते हैं। वह चित्रकला की शैलियों के क्षेत्रीय और भौगोलिक वर्गीकरण को त्याग देते हैं और परिवार को महत्व देते हैं, जहाँ कलाकारी का ज्ञान पिता से बेटे को मिला और शैली का संग्रहण हुआ। गोस्वामी कहते हैं, ''शैली या मुहावरों का वर्गीकरण राजाओं द्वारा किये जाने पर कभी–कभी राजनैतिक सीमाओं को जरूरत से ज्यादा महत्व मिलता है, जो वास्तव में बहुत सतही होते थे, और यह कल्पना करते थे कि कलाकार के प्रवास की सम्भावनाओं की पूरी स्थिति को हमेशा ध्यान में नहीं रखा गया, जिसके सम्बन्ध में हमारे पास पूरे सबूत हैं। चित्रकला में एक परिवार के पास अपनी कलम होती है, उसी प्रकार जैसे संगीत में अपनी शैली होती है, संगीतकारों का घराना होता है।''[37] हडौती क्षेत्र में, बूंदी में, और कोटा में चित्रकला के इतिहास से भी संकेत मिलता है कि कलाकार घूमते रहते थे और हम यह देख पाते हैं कि किस प्रकार दरबार से दरबार तक चित्रकला की शैलियों घूमती रहती थीं। इसी प्रकार पहाड़ी पर्वतीय क्षेत्र में, कलाकार गुलेर से चम्बा, जसरौता और बसोहली तक यात्रा करते थे।

पहाड़ी (शाब्दिक अर्थ 'पर्वतों से'') चित्रकला का तात्पर्य हिमालय पर्वत क्षेत्र की चित्रकला से है, क्षेत्र जो आज के वर्तमान उत्तराखण्ड राज्य से होता हुआ जम्मू और हिमांचल प्रदेश के कुछ हिस्से तक फैला है। ऐतिहासिक प्रमाणों के अनुसार यह क्षेत्र 35 राजघरानों में विभाजित था। कुछ राजघराने एक बड़े भू–भाग तक फैले हुए थे (जैसे कागड़ा, चम्बा और कुल्लू), अधिकतर राजघराने सामान्य स्वरूप के थे, (जैसे नुरपुर, मण्डी) जबकि कुछ तो 16 किमी. तक सतही क्षेत्र के बहुत छोटे भी थे, (जैसे जसरौता जम्मू क्षेत्र में)[38], हालांकि चित्रकला की गुणवत्ता और संख्या इस बात पर निर्भर नहीं थी कि कोई राज भौगोलिक और आर्थिक दृष्टि से कितना बड़ा है, जो बात सामने आयी वह यह कि केवल एक दो चित्रकारों से सजी चित्रशालायें प्रोत्साहन देने वाले और अच्छे कार्य की प्रशंसा करने वाले संरक्षकों के कारण खूब निखरे। उदाहरण स्वरूप, राजा बलवन्त सिंह (मृ. 1793), जो छोटे से राज्य जसरौटा के शासक थे, के लिये चित्रकार नयनसुख ने शुद्ध और सरल चित्रकारी की। 20 सालों से भी अधिक समय तक, चित्रकार नयनसुख ने राजा बलवन्त सिंह को अपने अभूतपूर्व अनौपचारिक चित्रों में असाधारण आत्मीयता से चित्रित किया। चित्रों में राजा को नाई द्वारा

[37] B.N. Goswamy, "Pahari Painting: The Family as a Basis of Style", *Marg*, Vol. XXI, September, 1968, No.4, 17.

[38] John Seyller, Jagdish Mittal, *Pahari paintings in the Jagdish and Kamla Mittal Museum of Indian Art* (Jagdish and Kamla Mittal Museum of Indian Art, Hyderabad, 2014), p. 5.

अपनी दाढ़ी की छटनी कराते हुए, गर्मियों की रात्रि में तम्बू के नीचे पत्र लिखते हुए, या महल की छत पर अकेले खड़े हुए दिखाया गया।[39]

नयनसुख चित्रकार इस बात के लिये उल्लेखनीय है कि उसकी सूक्ष्म दृष्टि, भावपूर्ण चित्रांकन मानव स्वभाव को लगभग पूर्णता से ग्रहण करते हैं। (चित्र सं. 16) में'' बलवन्त सिंह के लिये गायिका लाडबाई गाते हुए'' नयनसुख रचना को दो भागों में में बाँटते हैं। दाहिनी और राजा बलवन्त सिंह हैं जो हुक्का पी रहे हैं, एक लालिमा लिये हुए मसनद और उसी रंग के कालीन पर।

चित्र-16: गायक लडबाई बलवंत सिंह के लिए गाती है, नैनसुख, c. 1745-50 © The Trustees of the British Museum, 1948, 1009,0.130

उनका ध्यान आकर्षित होता है संगीतकारों के एक दल की ओर जो उनके सम्मुख कार्यक्रम देने आये हैं। दो औरते हैं और उनके साथ तीन पुरुष संगीतकार हैं। नयनसुख का उत्कृष्ठ कौशल था कि प्रत्येक व्यक्ति की विशेष आकृति और उनके स्वरूप में मानवीय चरित्रों को उकेरना। इसे जानना आसान है कि तानपुरे पर संगीत दे रही महिला एक कम उम्र की गायिका है जो बड़े मनोयोग से संगीत की प्रस्तुति दे रही है। उसके दाहिनी ओर एक प्रौढ़ महिला है जो अपने हाथों को मोड़ कर अपनी गोद में रखे हुए शान्त हैं। उन औरतों के पीछे, हम एक दुबले, पतली गर्दन वाले पुरुष को देखते हैं जिसके पास एक तार वाला यंत्र है। उसके बाद एक दाढ़ी वाला गहरे रंग का ढोलक वाला–ड्रम बजा रहा है। एक हलका पीला जामा पहने व्यक्ति है[40] जो असामान्य प्रकार का दो नली वाला आंचलिक यंत्र बजा रहा है। राजा की मृत्यु के बाद नयनसुख ने सोहली के राजा अमृतपाल (1757–1778) के साथ कार्य करना जारी रखा। हालांकि, नयनसुख के इस कार्यकाल में चित्रकार ने धार्मिक विचार युक्त आदर्श विषयों पर कविताओं पर कुछ गंभीर चित्र बनाये।

[39] For an exhaustive study on Nainsukh see, B.N. Goswamy, *Nainsukh of Guler: A Great Indian Painter from a Small Hill-State* (Artibus Asiae, Switzerland, 1997).
[40] Ibid., p. 128.

नयनसुख (नैनसुख) के प्राकृतिक चित्र उनका सूक्ष्मतम विवरणों पर ध्यान दिया जाना मुगल शैली से ही अधिकांशतः लिया गया। लेकिन पहाड़ी चित्रकारों ने इसको अपनाया। कला इतिहासकार अब यह मानते है कि पंजाब के पर्वतीय क्षेत्र की आरंभिक काल की चित्रकारी के जो चित्र हैं, मुगल शैली से प्रभावित चित्र हैं, और वर्णनात्मक चित्र 17 वीं शताब्दी के प्रथम अर्द्ध भाग से हैं।[41] यह स्वभाविक है कि स्वदेशीय परम्परा में चित्र 16वीं शताब्दी में भी तैयार किये जा रहे थे, लेकिन हमारे पास पहले किये गये कार्यों के बारे में कोई प्रमाण नहीं है। यह स्वीकार किया गया है कि मुगल कलाकार संभवतः पहाड़ी राज्यों की ओर 1585 और 1598 के तुरन्त बाद, जब अकबर ने मुगल राजधानी लाहौर बना ली, प्रवास कर गये। यह सर्वविदित है कि अकबर की मृत्यु के तुरन्त बाद, उसके बेटे और उत्तराधिकारी जहाँगीर ने शाही चित्रशाला को आकार में जबदस्त तरीके से छोटा कर दिया और बहुत से चित्रकार बिना संरक्षण छोड़ कर चले गये। वो सब कार्य की तलाश में दूसरे क्षेत्रीय राजघरानों में चले गये, और बहुत से पहाड़ी राजदरबारों और राजस्थानी में चले गये। यह भी पता चलता है कि जहाँगीर ने पंजाब के मैदानी भाग के पूर्वी किनारे पर लाहौर में समय–समय पर दरबार लगाये, जो पर्वतीय राज्य के करीब पड़ता है। 1615 ई. तक मुगलों से प्रशिक्षण प्राप्त चित्रकार संभवतः नुरपुर में और बाद में मंडी और विलासपुर में प्रवास कर कार्य करते रहे।[42]

1630 और 1670 के बीच में, मुगल शैली में तैयार किये गये चित्र बड़ी संख्या में मंडी के दरबार में बनाये गये, जिनको राजा हरी सिंह सेन (1607–64) और उनके पुत्र सूरज सेन (1623–37) का संरक्षण प्राप्त हुआ । जहाँगीर नामा में मुगल शहंशाह ने यह अंकित किया कि 1622 और 1624 के बीच, जहाँगीर पर्वतीय दरबारों के नज़दीक ठहरे हुए थे, और बहुत से स्थानीय राजाओं ने उनके ठहरने के स्थान का दौरा किया। यह सम्भव है कि हरी सिंह और उनके चित्रकारों को कई अवसरों पर मुगल चित्रों को देखने का अवसर मिला। संभवतः राजा स्वयं बहुत सी मुगल शैली की चित्रकलाओं को अपने साथ दरबार लाये और मुगल चित्रकार को अपने मातहत कार्य दिया।[43]

चित्रों के इस समूह में जटिल रंगों का प्रयोग किया गया, हल्के रंगों का प्राकृतिक रचना और वास्तविक दिखती मानवकृतियाँ को उकेरने में। उदाहरण के लिये, रामायण की चित्र श्रृंखला में विवाह के दृश्य (चित्र 17) में उल्लिखित सभी विशेषताएँ दिखाई देती हैं।

महल के आँगन में जब विवाह सम्पन्न होता था संभवतः जनानखाने का प्रवेश प्रतिबंधित होता था, जिसके लिये दाहिनी ओर एक द्वार रहता था। नारंगी चमकते–जामे में सजे–धजे, गहरे

[41]Cummins, *Indian Painting*, 166. Also see Catherine Glynn, "The Early Master at the Court of Mandi" in Milo C. Beach, Eberhard Fischer, B.N. Goswamy (eds.) *Masters of Indian Painting*, Vol I., 1100-1650(ArtibusAsiae Publishers, 2011), p. 411.

[42] John Seyller, Jagdish Mittal, *Pahari Drawings in the Jagdish and Kamla Mittal Museum of Indian Art* (Jagdish and Kamla Mittal Museum of Indian Art, Hyderabad, 2011), p. 11.

[43]Glynn, "The Early Master at the Court of Mandi", p. 413. For a Mughal-inspired portrait of Hari Sen, see *Raja Hari Sen of Mandi (r. 1604-1623-37)*, c. 1650, Northern India, Himachal Pradesh, Pahari Kingdom of Mandi, Page: 31.8 x 17.8 cm. Purchase and partial gift from the Catherine and Ralph Benkaim Collection; Severance and Greta Millikin Purchase Fund 2018.96, https://www.clevelandart.org/art/2018.96 (Retrieved 15 August 2021.)

चित्र-17: विवाह समारोह, रामायण का फोलियो, ca. 1640-50 © Freer Gallery of Art. Purchase from the Catherine and Ralph Benkaim Collection — Charles Lang Freer Endowment, F2017.13.2 https://asia.si.edu/object/F2017.13.2 (accessed 16 August 2021).

हरे रंग का शाल और सुनहरा ताज पहने वर तीन बार–दिखाई देते हैं। पहली बार महल के फाटक पर, विवाह स्थल पर पहुँचने पर, जहाँ उसका स्वागत महिलाओं द्वारा किया जाता है। दूसरी बार बीचों–बीच मंडप पर, और अन्त में तीसरी बार ऊपर बायें किनारे पर एक छोटे से कमरे में। दोनों ही मामलों में वह विवाह सम्बन्धी क्रियाकलापों में गहराई से रूचि लेता दिखाई देता है, जो क्रियायें गंभीर दिखने वाले पुजारी द्वारा कराई जाती हैं। पारम्परिक लाल रंग के वस्त्रों में सजी छोटी सी दुल्हन फर्श पर नजरे गड़ाये, एक फूस की छत के नीचे खड़ी होती है। वह अपनी चाचियों, बहनों और मित्रों से घिरी रहती हैं, जो उसे मण्डप की ओर ले जाती है। वह संयोजन छोटे, सावधानी से बनाई गई आकृतियों और मुगल शैली से प्रभावित वस्त्रों जिनमें जटिल विस्तृत चित्रकारी की गई होती है से भरा हुआ है। पीले हरे रंग की पृष्ठभूमि, आसमान में ऊँचाई पर छोटे–छोटे परिन्दे और जमीन पर सरू के वृक्ष लगे होते हैं। वे सब मुगल चित्र–कला की शैली के परिचायक होते हैं।[44] 1660 के बाद, एक साहसिक अपरिष्कृत शैली को मण्डी में पसंद किया गया, जब राजा सिधसेन (1684–1727), जो शिव के अनन्य भक्त थे, के लिये कई चित्र उक्त शैली में बनाये गये।(चित्र 18)[45]

चित्रकारों का एक समूह जिनका आरंभ गुजरात में हुआ था, 1625 के लगभग राज्य चम्बा पहुँचा। जगदीश मित्तल लिखता हैं कि जब वह हीरालाल को मिलने गये, जो चम्बा में चित्रकार परिवार का वंशज था, उसने बताया कि उसके पूर्वज गुजरात से थे, और उन्होंने लाहौर क्षेत्र से होते हुए चम्बा में प्रवास किया था। हीरालाल के पारिवारिक संग्रह में सत्रहवी शताब्दी के आरंभिक वर्षों से जुड़ी हुई चित्रों की उपलब्धता मुगल चित्रकला और रेखाकनों का सम्बन्ध पर्वतीय राज्यों में मुगल दरबार के चित्रकारों से जोड़ती है।[46]

[44] Ibid., pp. 411-415.
[45] For other portraits of Sidh Sen see, Goswamy & Fischer, *Pahari Masters,* pp. 190-209. Also see Seyller and Mittal, *Pahari Paintings,* pp. 86-105.
[46] Seyller and Mittal, *Pahari Drawings,* pp. 11-12.

चित्र-18: शिव के अवतार के रूप में मंडी के राजा सिद्ध सेन, ca. 1725, Museum of Fine Arts Boston, Keith Mcleod Fund, 2001.137.

बसोहिली के राज दरबार में 1660 के आसपास, जिसे विद्वानों ने पहाड़ी चित्रकला के सबसे पहले केन्द्र के रूप में पहले समझा था, एक शैली जो मुगल चित्रकला की प्राकृतिक परम्परा से पूर्णतः भिन्न थी, प्रचलित हुआ करती थी। इस समय दो श्रृंखलाओं तांत्रिक श्रृंखला (चित्र 19) और रसमंजरी में दिखती बसोहिली चित्रकला, गहरे प्राथमिक रंग, विशेष शैलीगत आकृतियाँ सामान्य से बड़े आकार और पान के पत्तों का अलंकृतीकरण के किये प्रयोग से चिन्हित होती है।

चित्र-19: एक तांत्रिक देवी श्रृंखला से, ऋषि च्यवन द्वारा देवी की पूजा की जाती है, ca. 1660-70, Basohli
© Freer Gallery of Art, Purchase — Charles Lang Freer Endowment,F1997.8.
https://asia.si.edu/object/F1997.8/(accessed 16 August 2021)

विद्वान सहमत हैं कि देवी शृंखला और आरंभिक रसमंजरी (1660–70) संभवतः एक ही चित्रकार का कार्य था, जिसे कृपाल कहा जाता था, जो छोटे से नुरपुर राज का निवासी था, जो बसोहिनी से रावी नदी के दूसरी ओर स्थित था। ऐसा माना जाता है कि कृपाल का पुत्र, देवीदास बसोहिली के दरबार में नियुक्ति पा गया था, जहाँ उसने रसमंजरी की दूसरी शृंखला 1695 में पूर्ण की। हम जानते हैं कि कृपाल के पौत्र और देवीदास के पुत्र भी चित्रकार थे, जिनकों गोलू कहा जाता था, जिन्होंने पारिवारिक चित्रशाला में स्थापित परम्परागत चित्रकला का अनुसरण किया।[47]

चित्र सं 19 में च्यवन नामक चिकित्सक को ध्यान लगाये जाने के कारण देवी भद्रकाली के दर्शन हुए, जो एक शव पर बैठी हुई थी। पीले वस्त्रों में सजी हुई और विष्णु जी से सम्बद्ध लम्बी माला, और विष्णु जी के प्रतीक चिन्ह– चक्र, गदा, शंख और पद्म भी उपस्थित थे। हरे भरे पत्ते काल्पनिक वृक्षों के साथ, छोटे फूलों वाली कलिकायें यह संकेत देती है कि दृश्य किसी जंगल का है। श्रृंखला की अन्य चित्रकला, देवी को अपने प्रतिष्ठित स्वरूप में दिखाती हैं, जिसमें कोई भक्त नहीं होतां। ऐसा लगता है कि इस प्रकार के चित्र भक्त की पूजा (ध्यान) में मदद करने के लिये एक साधन की तरह बनाये गये हैं।[48]

18वीं शताब्दी के प्रथम अर्धभाग में पर्वतीय क्षेत्र में चित्रकला की क्रियात्मकता गुलेर के चित्रकारों के एक प्रसिद्ध परिवार के प्रभाव में रही है। पंडित सेठू के समय से आरंभ हुआ पारिवारिक चित्रशाला का यह तरीका कई पीढ़ी तक लगातार चलता रहा। उसके दोनों बच्चे मानाकू और नैनसुख बहुत ही उर्वर चित्रकार थे। हमने नैनसुख की कलाकारी पहले देख ही ली है। मानाकू लगभग 1760 तक क्रियात्मक रहा और रामायण, गीतगोविन्द, देवी माहात्म्य, भागवत पुराण व अन्य कई श्रृंखलाओं के अद्भुत चित्रों का रचयिता रहा है। मनाकू के बेटे फत्तू और कुशल भी जाने माने चित्रकार थे। इसी प्रकार हम जानते हैं कि नैन–सुख के चार बेटे थे–काम, गौधू निक्का और राझाँ। मानक ओर नैनसुख के बाद की पीढ़ी पर्वतीय क्षेत्र के कई राजघरानों के लिये अठारहवीं शताब्दी और 19वीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों तक कार्य करती रही।[49]

बोध प्रश्न 2

(1) चित्रकला की पहाड़ी परम्परा से जुड़े परिवारों के चित्रकारों पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

.....

.....

.....

.....

[47] B.N. Goswamy, Eberhard Fischer "Kripal, Devidasa and Golu of Nurpur", *Masters of Indian Painting*, Vol II., 1650-1900 (Artibus Asiae Publishers, 2011), pp. 439-458.

[48] B.N. Goswamy, Eberhard Fischer, *Pahari Masters: Court Painters of Northern India* (Artibus Asiae Publishers & Museum Reitberg, Zurich, 1992), p. 38.

[49] For a brief overview of the careers of Manaku, his sons and grandsons see, B.N. Goswamy, Eberhard Fischer, "Manaku" and "The First Generation after Manaku and Nainsukh of Guler", *Masters of Indian Painting*, Vol II., pp. 641-658 and 687-718.

(2) 17वीं शताब्दी में बसोहिली और मण्डी की चित्रकला में क्या असमानतायें थी?

.....

.....

.....

.....

15.4 दख्खिन में चित्रकला का संरक्षण

पन्द्रहवीं शताब्दी के अन्तिम वर्षों में बहमनी राज्य के बिखरने के बाद, बीजापुर, गोलकुण्डा, अहमद नगर, बीदर और बेरार के दरबार स्वतंत्र सल्तनत की तरह स्थापित हो गये। दख्खिनी बंदरगाह पूर्वी और पश्चिमी व्यापार मार्गों को जोड़ते थे। लम्बी समुद्र तटीय सीमा ने समुद्री अर्थव्यवस्था को तेजी दी, और दक्षिण दूर–दराज के देशों से व्यापारिक सम्बन्ध बना सका। सभी कार्यशालाओं में, इस प्रकार के उत्पाद तैयार किये जाते थे जो दक्षिण–पूर्व एशिया, परशिया, यूरोप के ग्राहकों के पसन्द के अनुसार होते थे।[50] दक्षिण के सल्तनतों ने एक अनोखी प्रकार की कला की शब्दावली को चित्रों में डाला और वस्त्रों में चित्रित किया, धातु के बर्तनों, पत्थर पर उकेरना शुरू किया। दक्षिण की कला को अक्सर काव्यात्मक और आश्चर्य भरा हुआ स्वीकार किया गया।

दक्षिण समाज की नस्लीय संरचना ने महानगरीय और बहु–सांस्कृतिकवाद को दक्षिण की कला, साहित्य, धर्म और भाषा को प्रतिबिम्बित करते हुए पोषित किया। दक्षिण के सुल्तान शिया मुसलमान थे और ईरानी और तुर्की शासकों के बहुत करीबी होने के लिये जाने जाते थे। उनकी कला साहित्य (काव्य) और संगीत के संरक्षण के तरीकों को अपनाते हुए देखे गये। लगातार मध्य पूर्व के सम्पर्क में रहने से तुर्की, परशिया और अरब से आने वालों का तांता रहा। सुल्तानों की सम्पत्ति और उनकी उदारता से आकर्षित होकर, कवि, कलाकार, व्यापारी, सैनिक और सूफी सन्त दक्षिण प्रवास कर गये। अफ्रीकी संभ्रान्त लोग योद्धाओं के रूप में आये और प्रधानमंत्री तथा जनरल के पद तक पहुँच गये। ये समाज दक्षिण की स्थानीय जनता के साथ मिलकर इस क्षेत्र के विभिन्न संस्कृतियों की मिलन–बिन्दु बन गये।

1605–1750 का काल दक्षिणी कला को मुगलों के साथ तल्ख सम्बन्धों के कारण आकार दे गया। उत्तर भारत में अपना साम्राज्य स्थापित कर लेने के बाद अकबर ने 16वीं शताब्दी के अन्तिम दशक में अपना साम्राज्य दक्षिण में भी बढ़ाने पर विचार किया। बुरहान पुर को मुगल की चौकी के रूप में स्थापित किया गया और यह 1609 के बाद मुगलों के दक्षिणी राज्य की राजधानी बन गई। इससे अन्तर्सास्कृतिक आदान–प्रदान को बढ़ावा मिला। मुगल चित्रकला में दक्खिन के रूप रंग दिखने लगे। इसी तरह दक्षिण चित्रकला के मुगल शैली का प्रभाव पड़ा। उदाहरण के लिये, मुख्य चित्रकार फारुख हुसैन (जिन्हें फारुख बेग भी कहा गया) की आजीविका की यात्रा यह बताती है कि उस समय दक्खिन की संस्कृति पर्शियन –इस्लामिक के वृहत क्षेत्र से जुडी हुई थी।

मूलरूप से सिराज का रहने वाला, फारूख हुसैन कार्य की तलाश में खुरासान मसहद–पुस्तकालय–चित्रशाला में प्रवास कर गया और फिर काबुल चला गया, जहाँ उसने अकबर के सौतेले भाई मिर्जा हाकिम के लिये चित्र बनाये। 1585 में, यह चित्रकार अकबर

[50] Kavita Singh (ed.) *Scent upon a Southern Breeze: The Synaesthetic Arts of the Deccan* (Mumbai: Marg Publications, 2018), 9.

की सेवा में आ गया। मुगल चित्रशाला में अर्द्ध–दशक तक कार्य करने के पश्चात् फारुख हुसैन बीजापुर प्रवास कर गया, और वहाँ सुल्तान आदिल शाह द्वितीय का (1550–1627) प्रधान चित्रकार बन गया (चित्र 24)।[51] 1609 तक, वह फिर से मुगल बादशाह जहाँगीर की सेवा में आ गया (1605–1627)। अन्य चित्रकारों जैसे चित्रकार मोहम्मद अली का कार्य काल भी इसी गति चक्र की तरह रहा। कदाचित, ईरान में जन्में, मोहम्मद अली बीजापुर गये, और 1590 के लगभग जहाँगीर के मातहत (1600–1620) चित्रकारी करते रहे। फारुख हुसैन के पदचिन्हों पर करीब से चलने वाले मोहमद अली के काम में परशिया के विषय, दक्षिणी स्वरूप और रंग तथा मुगल शैली की आकृतियों का विशिष्ट मेल दिखाई देता है।[52]

दक्षिण का प्रभाव उन राजाओं द्वारा राजपूतों के दरबार तक पहुँचा, जो कई वर्षों तक दक्षिण में मनसबदार रहे। उदाहरण के लिये, चित्रकलायें और हस्तलिखित अभिलेख को देखकर पता चलता है, जो बीकानेर के राजा अनूप सिंह युद्ध में जीत के साथ लूट कर घर लाये गये।[53] इसी प्रकार पुस्तक 4 (किष्किंधा काण्ड) और पुस्तक 5(सुन्दर काण्ड) प्रसिद्ध रामायण जो मेवाड़ के राजा महाराणा जगत सिंह–प्रथम (1607–52) के लिये, 1650 के आसपास चित्रित की गई, यह बताती है कि चित्रकार और उनकी कला कृतियाँ राजस्थान और दक्षिण के मध्य आती जाती रहीं। चित्र सं. 20 में क्रोध से भरे हुए राम परासरवन पर्वत की एक गुफा में कमल आधार पर पैरों को मोड़ कर बैठे हुए है, जहाँ वे और उनके भ्राता लक्ष्मण ने वर्षों ऋतु व्यतीत की। राम लक्ष्मण से किष्किंधा जाने के लिये कहते हैं, सुग्रीव को उसका वचन याद दिलाने के लिये कि उसने सीता की खोज करने में मदद का वचन दिया था। दाहिनी ओर लक्ष्मण किष्किंधा की यात्रा पर जाने के लिये निकलते हैं। दोनों भाइयों ने दक्षिणी ढंग से कीमती सुसज्जित दुपट्टे पहने हुए हैं जिनको उन्होंने अपने ऊपरी भाग में डाला हुआ है। अलग–अलग रंगों का प्रयोग चित्र में हरे, बैंगनी और पीले एक दूसरे के सामने किया गया जो दक्षिणी चित्रकला की याद ताजा करती हैं। परसीनेट पत्थर, बादलों की चाइना की किस्में और गुलाबी लिलाक के लिये वरीयता कलाकार/चित्रकार की दक्षिणी अभ्यास की सूचना देती है।

चित्र-20: राम प्रस्रवण पर्वत पर बैठते हैं और लक्ष्मण को किष्किंधा जाने के लिए कहते हैं कि सुग्रीव को अपना वादा याद दिलाएं। मेवाड़ रामायण, उदयपुर, c. 1653. © The British Library Borrd, Add. MS 15296(2), f. 30r

[51] Keelan Overtan, "Book Culture, Royal Libraries, and Persiante Painting in Bijapur, circa 1580-1630", *Muqarnas* (Vol. 33, 2016), 93.
[52] John Seyller, "Muhammad Ali" in *Masters of Indian Painting* Vol. I, 279-290.
[53] For a painting with a *devanagari* inscription noting that it was captured from the treasury of Adoni in 1691, see cat. 28, "Procession of Sultan Ibrahim 'Adil Shah II" in Navina Najat Haidar and Marika Sardar, *Sultans of Deccan India 1500-1700 Opulence and Fantasy* (New York: Metropolitan Museum of Art, 2015). https://www.metmuseum.org/art/collection/search/454818 (retrieved 12 January, 2019).

दक्षिणी और राजपूती कथा का संगम 'रागमाला' समूह में भी दिखाई देता है, (शाब्दिक रूप में जिसे संगीत की माला कह सकते हैं); यह 36 कलाकृतियों/चित्रों की एक श्रृंखला है, जो कविता और आकृतियों के द्वारा संगीत के भाव जगाती है और जो 16वीं शताब्दी के अन्त में चित्रित की गई (चित्र 21)। यद्यपि चित्रों की उत्पत्ति का समय सुनिश्चित नहीं किया जा सकता, परिस्थितियों के प्रमाण इसे उत्तरी दक्कन (दक्खिन) से जोड़ती हैं। इनमें से कई चित्र पहले बीकानेर के शाही संग्रहालय में रहे हैं।[54]

चित्र-21: गौरी रागिनी, मल्कोस राग की पहली पत्नी, रागमाला (मेलोडी की माला) से फोलियो, उत्तरी डेक्कन, अहमदनगर (?), 1575-1600, 20.32 x 17.78 cm. © LACMA Bequest of Edwin Binney, 3rd, M.90.141.2

'गुण्डाकारी रागिनी' का एक पृष्ठ जोधपुर संग्रहालय में है।[55] संस्कृत में उकेरी हुई भाषा बताती है कि इसके संरक्षक हिन्दू थे। यह पृष्ठ (चित्र 21) और अन्य समान रचनायें राजपूत राजाओं ने ही निर्देशित की होंगी जो मुगलों के दक्खिन विजय के दौरान की हैं। एक विशिष्ट प्रकार के रंगों के सम्मिश्रण से रची गई शान्त और चमकीले गुलाबी रंगों और स्याह नीले रंग से चित्रित हरा भरा किन्तु सलीकेदार परिदृश्य की रचना प्रमुखता से दिखती है। पेड़ों के तनों से तैयार रचना के केन्द्र में 'गौरी रागिनी', 'टहलती हुई नायिका है, जो आम्र के वृक्ष से फूलों को तोड़ती है, अपनी विश्वसनीय साखियों के साथ। छोटे–छोटे मुख लम्बे शरीर और पतली सी कमर, चित्रित नारी चमकते घाघरे स्कर्ट और चोलियों संग सोने की कशीदाकारी वाली पारदर्शी ओढ़िनियों में दिखाई देती है। कमरबन्द और गुलबन्द के किनारे एक विशेष प्रकार के कोणीय ढंग से चित्रित हैं। गौरी रागिनी का भाव एक नारी द्वारा दाहिनी ओर वीणा

[54] Ibid., 61.

[55] "Page from a Ragamala series: Ragini Gundakari" in Karni Jasol, *Peacock in the Desert: The Royal Arts of Jodhpur, India* (Houston: Museum of Fine Arts Houston, 2018), Cat. 54.

(तार युक्त यंत्र) से उजागर किया जाता है। सुन्दर सुगंध वाली फूलों की बेल, पेड़ के तने के चारों ओर लिपटी हुई आम्र में पत्तों तक जाती है। गौरी फूलों को दोनों हाथों में लेती है और अपनी बायीं ओर कलाई को ऊपर उठाती है, मानों सुगंध की ओर बढ़कर उसको पकड़ना चाहती हो।[56]

बहमनी साम्राज्य से पहला स्वतंत्र निजाम शाही राजवंश था (1490–1636), उनकी राजधानी 'अहमदनगर' चित्रकला के महत्त्वपूर्ण संरक्षकों में से एक केन्द्र रही। 1565 के आसपास ''तारीक–ए–हुसैन शाही' को चित्रित किया गया।

1600 तक, अहमदनगर का बड़ा हिस्सा मुगलों द्वारा अपने वश में कर लिया गया, लेकिन उसके बाद के वर्षों में अपनी छिन गई सीमाओं के अधिकांश हिस्से को पुनः वापस प्राप्त कर लिया गया। सत्रहवीं शताब्दी के प्रथम अर्द्धांश में; सल्तनत मलिक अम्बर नाम के शक्तिशाली प्रधानमंत्री के नियंत्रण में रहा। एक पूर्व अफ्रीकी (हब्शी) किराये का सैनिक मलिक अम्बर बहुत ही चतुर रणनीतिकार था, और उसने मुगलों को तीस साल तक दूर ही रखा। दक्षिण से कितने ही चित्र जो अफ्रीकियों के थे मलिक अम्बर और उसके पुत्र फ़तेह खान को शामिल करते हुए यह चित्र अहमदनगर की चित्रकला पर मुग़ल छाप दिखती है। मुग़ल चित्रों की तरह ही उनमें मुखाकृति और पैर और सीने का भाग देखने वाले की ओर होते थे। जबकि अन्य स्वरूप खास तौर पर दक्षिण की तर्ज पर होते थे। महीन श्वेत वस्त्रों में सजे, पिता और पुत्र ने लम्बे समय तक दख्खिनी तलवार को सम्हाले रखा। एक नलीदार बर्तन या बटुआ उनके कमर बन्द (पटका) से लटकता रहता। ये आकार ऊँचाई से आयतन में बड़े और भारी दिखते, परन्तु प्रतिरूपण में उपयुक्त नहीं थे। सूखे हल्के रंगों को प्राथमिकता दी जाती और फतह खान का गुलूबन्द हवा में उसके पीछे की ओर लहराता रहता।

चित्र-22: एक अफ्रीकी दरबारी का पोर्ट्रेट, संभवतः मलिक अंबर, 17वीं सदी की शुरुआत में, © Museum of Fine Arts Boston Arthur Mason Knapp Fund. 26.8.

चित्र-23: संभवतः मलिक अंबर, अहमदनगर के पुत्र फतह खान, c. 1610-20 © Museum of Fine Arts VBoston, Ross-Comaraswamy Collection, 17.3103

[56] The synaesthetic shift in Indian art historiography is recent. To understand how images, sound, taste and smell come together in creating an aesthetic experience see essays in Kavita Singh (ed.) *Scent upon a Southern Breeze* (Mumbai: Marg Publications, 2018).

बीजापुर की आदिल शाही राजवंश की स्थापना (1490–1686) युसुफ आदिल खान ने की जो मध्य पूर्व से प्रवासी बन कर आया था। बीजापुर चित्रकला अली आदिल शाह–प्रथम (1558–80) के समय से जानी जाती है, जब 1570 में 'नुजुम–एल–उलुम'' (विज्ञान के सितारे) का चित्रण हुआ था। अक्सर मुगल कला से तुलना करने पर, बीजापुर के चित्र अद्भुत परिदृश्य और आदर्श स्वरूप प्रदर्शित करते हैं। 16वीं शताब्दी के दूसरे भाग के अन्तिम वर्षों में, और सत्रहवीं सदी के आरंभ के अर्द्धभाग में, बीजापुर की चित्रकला इब्राहीम आदिल शाह–द्वितीय (1574–1627) के कार्यकाल में फलीभूत हुई। इब्राहीम आदिल शाह–द्वितीय, संपूर्ण रूप से सौन्दर्यवादी और कुशल संगीतकार थे। कहा जाता है कि उन्होंने 'किताब–ए–नौरस' (नौ रसों की पुस्तक) लिखी, जिसमें उनसठ कवितायें संकलित हैं, इब्राहीम आदिल शाह–द्वितीय स्वयं को एक सच्चा मुलमान और एक हिन्दू भक्त मानते थे। इब्राहीम आदिल शाह–द्वितीय के जमाने में चित्रकारी किताब–ए–नौरस की कविताओं को गुंजाती थीं। (चित्र 24) इस चित्र में फारुख बेग द्वारा बनायी गई आकृति में, बीजापुरी सुल्तान तम्बूरा बजाते हुए दिखाया है, जिनको उसने मोती खान का नाम दिया है। इब्राहीम आदिल शाह के गले में पड़ी रुद्राक्ष की माला, वर्ण संकर धार्मिकता और भक्ति दिखाती है, संगीत और ज्ञान की हिन्दू देवी सरस्वती के प्रति। सभी चित्रित व्यक्ति दख्खिनी किस्म की पगड़ी पहने हैं, जो लम्बी नुकीली है और इसके साथ स्वर्ण से कशीदाकारी किया हुआ चौड़ा वस्त्र भी है। इसकी पृष्ठभूमि में दो हाथी हैं, और एक छोटा शहर का दृश्य है जो संभवतः बीजापुर ही है।

चित्र-24: सुल्तान इब्राहिम आदिल शाह द्वितीय तंबूर बजाते हुए, फारुख बेगी को जिम्मेदार ठहराया, ca. 1595-1600, Bijapur © National Museum, Prague. Source: Wikimedia Commons

अन्य महत्त्वपूर्ण हस्ताभिलेख जो इब्राहीम आदिल शाह द्वितीय के लिये रेखांकित किये गये, उनमें 'पेम नेम' (प्यार के कानून) (अब जो ब्रिटिश लाइब्रेरी, लंदन के संग्रहालय में हैं) और 'शाहनामा' (बादशाहों की किताब) (अब जो कला के मेट्रोपोलिटन संग्रहालय, न्यूयार्क में हैं)। दोनों ही हस्ताभिलेखों के चित्र परशिया की काल्पनिकता और बीजापुर की संवेदनशीलता का मिश्रण है। भू–परिदृश्य उनके ही समान हैं जो इब्राहीम आदिल शाह–द्वितीय के चित्रों में दिखते हैं। शाहनामा में, आकृतियाँ परशिया के वस्त्रों में स्पष्ट दिखाई देती है जिनकों 16वीं शताब्दी में परशिया के वस्त्रों के आधार पर बनाया गया।[57]

[57] For paintings from these manuscripts see Haidar and Sardar, *Sultans of Deccan India*, cat. 29 and cat. 34-37.

इब्राहीम आदिल शाह–द्वितीय के प्रमुख चित्रकारों में से एक अली रजा, सर्वश्रेष्ठ चित्रकार थे। अपनी यथार्थता, आलेखन और तकनीकी कौशल्य के लिये जाने जाते थे। चित्रकार ने ऐसी अन्तर्दृष्टि परक चित्र सुल्तान और उनके दरबारियों के बनाये। चित्र में आकृतियाँ सादी पृष्ठभूमि में खींची गई, जो उनको अलग करते हैं और जिनमें किनारों पर फूलों और पक्षियों की जानकारी के साथ उनकी खूबसूरती बढ़ाई गई है। एक चित्र ''एक मुल्ला'' में सूक्ष्म से सूक्ष्म विस्तार देते हुए (चित्र 25) एक किनारे पर नीले आइरिस के फूल खिलते हुए और तालाब के किनारे पर दो तीतर भोजन की तलाश करते हुए दिखते हैं। ऐसी ही पैनी दृष्टि से तैयार की हुई आकृति एक रूढ़िवादी धार्मिक सभ्रान्त व्यक्ति की रही है। यह सुझाव दिया गया है कि उनके कान्धे पर जो बिना रंग का शाल डाला गया है वह कश्मीरी पशमीना है और हाथ में जो किताब है जिसपे सोने की मजबूत जिल्द चढ़ी है, वह कुरान है। मुल्ला की जागरूक और व्यस्त नजरें बताती हैं कि वह एक बुद्धिमान और जिज्ञासु व्यक्ति हैं।

चित्र-25: मुल्ला किताब पकड़े हुए, बीजापुरी, c. 1610, © British Library, J.25, 14. Image in Public Domain. Source : https://blogs.bl.uk/asian-and-african/2019/08/emanating-light-illumination-in-islamic-manuscripts-html

मोहम्मद आदिल शाह (1627–56) और इसके उत्तराधिकारियों के अन्तर्गत आकृतियों के रेखांकन का काम महत्व पाता रहा। मोहम्मद आदिल शाह, इस चित्रकारी में अक्सर अपने शक्तिशाली प्रधानमंत्री इखलास खान (मृ. 1656) से सहयोग पाते रहे। (चित्र 26) शाही हाथी

चित्र-26: हाथी पर सवार सुल्तान मुहम्मद आदिल शाह और इखलास खान, बीजापुर, c. 1645, Collection of Howard Hodgkin. Source: Wikimedia Commons

में सवार इखलास खान, एक कपड़े के टुकड़े को हवा में लहराता है, जो दख्खिन में सार्वभौमिकता का प्रतीक होता है, जबकि मोहम्मद आदिल शाह हाथी को अंकुश से आगे बढ़ाते हैं। एक भव्य प्रभामण्डल जैसा कि मुगल चित्रों के शाही आकृतियों के चारों ओर दिखता है, मोहम्मद आदिल शाह के मुख के चारों ओर दिखाई देता है।

दक्षिण–पूर्व की गोलकुण्डा सल्तनत की नींव कुतुब कुली शाह ने रखी जो पश्चिमी ईरान के क्वारा कोयूनलू जाति के थे। कुतुबशाही शासकों ने ईरान के सफाविद (1501–1722) के साथ कूटनीतिक सम्बन्ध बनाये रखे और परशिया के चित्रकारों और लेखकों को अपने दरबार की ओर आकर्षित करते रहे। 1591 में, मुहम्मद कुलीकुत्ब शाह (1580–1612) ने अपनी राजधानी गोलकुण्डा से हैदराबाद की। सपाट भूमि पर स्थित बिना किसी प्राकृतिक सुरक्षा के, नई राजधानी सल्तनत की शक्ति और वैभव का प्रतीक बनी। वास्तुकला के अतिरिक्त, मुहम्मद कुलीकुत्ब शाह की चित्रकला के प्रति संवेदनायें उनकी कविताओं में प्रदर्शित हो जाती हैं, उनमें से कुछ को रेखाओं में उत्कीर्ण किया गया है, और हस्तलेख में भी संग्रहित किया गया है। मोहम्द कुलीकुत्ब शाह के रेखांकन चित्रों के समकालीन चित्र सामने नहीं आ सके।

चित्र-27: एक गोलकुंडा राजकुमार, ca. 1660-70, © MuseeGuimet, Paris, MG 9183. Source: http://www.metmuseum.org/blogs/ruminations/2015/games-of-scale

गोलकुण्डा चित्रों का बार–बार दिखने वाला स्वरूप सत्रहवीं शती के उत्तरार्द्ध से सामने आया वह उनके स्तर में परम्परागत बदलाव का है। एक अज्ञात युवराज के चित्र के रेखांकन में (चित्र 27), चित्र के तल भाग में चारों तरफ का परिदृश्य और आकृतियाँ सूक्ष्मतम पैमाने पर दिखाई जाती थीं। पूरी तरह ध्यान देकर रेखांकित मोर का एक जोड़ा, जो जमीन से ऊपर उठी हुई चट्टान पर बैठा है, एक काले हिरन का जोड़ा और बकरी आसपास दौड़ लगाते दिखते हैं। कमल पुष्प के तल के पास एक व्यक्ति लम्बे भाले और छलावरण परदे से शिकार कर रहा है, और दो लोग बाज पकड़े हुए है।

1686 व 1687 में, मुगल सेनाओं ने औरंगजेब के नेतृत्व में बीजापुर और गोलकुण्डा पर हमला किया और अपने आधीन कर लिया। दोनों ही सीमाओं को मुगल साम्राज्य में मिला लिया गया और मुगल राज्यपाल के अन्तर्गत रखा गया। चित्रकार उत्तर में राजस्थान के दरबारों में चित्रशालाओं के केन्द्रों में यहाँ तक कि पंजाब के पर्वतीय राज्यों तक चले गये। विषयों और विचारों की दृष्टि से वे दख्खिनी कला से सहयोग करते रहे। जैसे कि पशुओं के समूह या शक्तिहीन नाग साधु के साथ, जो चम्बा की चित्रकला के 1700 तक दिखता है।[58]

[58] John Seyller, "Deccani Elements in Early Pahari Painting", Navina Najat Haidar and Marika Sardar (ed.) *Sultans of the South: Arts of India's Deccan Courts, 1323-1687* (New York: The Metropolitan Museum of Art, 2011), 64-81.

चित्र-28: कॉर्नेलिस वैन डेन बोगेर्ड, गोलकुंडा का जुलूस, ca. 1687 © David Collection Copenhagen, 42/2008.
Source: https://www.davidmus.dk/en/collections/islamic/dynasties/sultanates/art/43-2008-42-2008

दख्खिन का सर्वदेशीय संस्कार गोलकुण्डा की चित्रकला में 17वी शताब्दी के अन्तिम वर्षों से दिखता है। दो चित्रों में, एक डच व्यक्ति, जो ईस्ट इण्डिया कम्पनी में सेवारत था, (वी.ओ.सी.) कौरनेलिस वान दी बोगार्डे स्थानीय शासक के रूप में प्रतिनिधित्व करता था। एक चित्र में वह दरबार लगाता है और दूसरे चित्र में वह एक राजकीय जुलूस में एक विचित्र घोड़े पर सवार होता है । (चित्र 28) दोनों ही चित्रों को एक स्थानीय चित्रकार ने कौरनेलिस वान डेन बोगार्डे के लिये बनाया था, जो गोलकुण्डा में डच व्यापारिक पद पर प्रभारी था।

बोध प्रश्न 3

1) दक्खिन की चित्रकला में सर्वदेशीयता को कैसे प्रतिबिम्बित किया गया है?

.....

.....

.....

.....

2) उत्तर भारत में बने चित्र और दक्खिन में बनाये गये चित्रों में क्या सम्बन्ध है? उन अन्तरों और प्रभावों को स्पष्ट कीजिए, जो दोनों क्षेत्रों ने एक दूसरे पर डाला।

.....

.....

.....

.....

3) इस अवधि के दौरान दक्कन क्षेत्रों में विकसित चित्रों की विभिन्न शैलियों पर एक नोट लिखें।

.....

.....

.....

.....

15.5 सारांश

हमने देखा कि विभिन्न प्रकार की चित्रकला की तरीकों को भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में संरक्षण प्राप्त हुआ जो मुगल दरबारों में शाही चित्रों के साथ–साथ चला। राजनैतिक और सामाजिक अन्तरक्रिया से विचारों का आदान–प्रदान हुआ। संरक्षक की महता के साथ–साथ, मुगल शैली के प्रसार में चित्रकारों द्वारा भी मुख्य भूमिका निभाई गई, क्योंकि वे एक राज दरबार से दूसरे दरबार में जाते रहे। जनप्रिय सोच के चित्र जो क्षेत्रीय दरबारों में बने यह बताते हैं कि आकृति रेखांकन के साथ–साथ काव्यात्मक विषय भी चुने गये। अभिव्यक्ति की दो धाराओं माध्यमों के बीच विचारों का जोरदार आदान–प्रदान हुआ। इस इकाई ने इस बात का परीक्षण किया कि राजनैतिक सामाजिक और धार्मिक बदलाव की स्थितियाँ उक्त काल की चित्रकला के सृजन में प्रतिबिम्बित हुई।

15.6 शब्दावली

नुजुम–एल–ऊलुम – विज्ञान के सितारे।

किताब–ए–नौरस – नौ रसों की किताब, उनसठ कविताओं का संग्रह।

अंकुश – हाथी पर नियंत्रण करने वाला यंत्र।

चितेरा या चतेरा – चित्रकार।

रागमाला – 'रागों' की माला' चित्रकार द्वारा बनाया गया चित्र, जिसमें संगीत के भाव को व्यक्तित्व प्रदान कर जब कोई राग रंगों, आकारों और आकृतियों के साथ नायक और नायिका का रूप देता है।

पोट्रेट्स – एक चित्र, चित्रकला या तस्वीर व्यक्ति की।

लक्षण – संज्ञानात्मक गुण।

रसिक – विशेषज्ञ।

रूद्रवीणा – तार–युक्त संगीत का यंत्र।

कलम – लेखनी, चित्रकारी की शैली।

मोरछाल – मोर के पंख से बना पंखा।

अजायव – आश्चर्य का भाव।

घरबियाँ – तुर्की परशियन और अरब प्रवासी।

ओढनी – स्वर्ण रचित कसीदाकारी वाला पर्दा।

15.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

(1) 15.2 अंश देखें। यह आशा की जाती है कि उत्तर में यह जाँच की जायेगी कि किस प्रकार मुगल शैली की चित्रकला चित्रकारों के प्रवास और राजनैतिक सम्बन्धों के कारण राजपूती घरानों में पहुँची ।

(2) 15.2 अंश देखें। बूंदी और कोटा की चित्रकला के विभिन्न आयाम उत्तर का मुख्य भाग बनेंगे।

बोध प्रश्न 2

(1) 15.3 अंश देखें। यह आशा की जाती है कि उत्तर यह विश्लेषित करेगा कि चित्रकारों की प्रशिक्षित होने की प्रक्रिया एक पीढ़ी से अगली पीढ़ी की ओर परिवार आधारित रही।

(2) 15.3 अंश देखें। उत्तर इसका विश्लेषण करेगा कि मण्डी की मुगल शैली की स्वाभाविकता और बसोहिली की स्थानीय शैली की परम्परा में क्या अन्तर है।

बोध प्रश्न 3

(1) 15.4 अंश देखें। उत्तर इस बात को स्पष्ट करे कि किस प्रकार दक्खिन समाज की सर्वदेशीयता के रूप चित्रों में दिखाई दिये।

(2) 15.4 अंश देखें। उत्तर इस बात को दिखाये कि मुगल शैली की ओर दक्खिन चित्रकला में क्या अन्तर है और स्पष्ट करे कि किस प्रकार दक्खिन चित्रकला के स्वरूप मुगल और राजपूती चित्रों में दिखाई दिये।

इस इकाई के लिए कुछ उपयोगी अध्ययन सामग्री

Coomaraswamy, Ananda. 1916. *Rajput Painting: Being an Account of the Hindu Paintings of Rajasthan and the Panjab Himalayas from the Sixteenth to the Nineteenth Century, Described in Their Relation to Contemporary Thought with Texts and Translations*. London, New York: Oxford University Press.

Das, Asok Kumar. 2000. "Court Painting for the Amber Ruler, circa 1590-1727" in Andrew Topsfield. ed. *Court Painting in Rajasthan.* Mumbai: Marg Publications, pp.41-56.

Goswamy, B.N. 1986. "Essence and appearance: some note on Indian Portraiture" in Robert Skelton. ed. *Facets of Indian Art.* London: Victoria and Albert Museum.

Goswamy, B.N. 1968. "Pahari Painting: The Family as a Basis of Style", *Marg*, Vol. XXI, September, No.4.

Goswamy, B.N. 1997. *Nainsukh of Guler: A Great Indian Painter from a Small Hill-State*, Switzerland: Artibus Asiae.

Asher, Catherine B. 2008. "Excavating Communalism: Kachhwaha *Rajdharma* and Mughal Sovereignty" in Rajat Datta. ed. *Rethinking a Millennium: Perspectives on Indian History from the 8th to the 18th century, Essays For Harbans Mukhiya.* Delhi: Aakar Books.

Glynn, Catherine & Ellen Smart. 1997. "A Mughal icon re-examined", *Artibus Asiae*, Vol 57, No. 1/2, pp. 5-15.

Glynn, Catherine, 2011. "The Early Master at the Court of Mandi" in Milo C. Beach, Eberhard Fischer, B.N. Goswamy. eds. *Masters of Indian Painting*, Vol I., 1100-1650, Switzerland: Artibus Asiae Publishers.

Diamond, Debra, Catherine Glynn, Karni Singh Jasol. 2008. *Garden & Cosmos: The Royal Paintings of Jodhpur.* Washington: Freer Gallery of Art and the Arthur M. Sackler Gallery.

Khera, Dipti. 2016. "Jagvilasa: Picturing Worlds of Pleasure and Power in 18th-Century Udaipur Painting", in Aitken (ed.) *A Magic World: New Visions of Indian Painting. IMumbai:* Marg Foundation.

Cummins, Joan 2006. *Indian Painting: From Cave Temples to the Colonial Period.*, Boston: Museum of Fine Arts Publications.

Seyller, John. 2011. "Deccani Elements in Early Pahari Painting", Navina Najat Haidar and Marika Sardar. ed. *Sultans of the South: Arts of India's Deccan Courts, 1323-1687.* New York: The Metropolitan Museum of Art.

Seyller, John and Jagdish Mittal. 2014. *Pahari paintings in the Jagdish and Kamla Mittal Museum of Indian Art*, Hyderabad: Jagdish and Kamla Mittal Museum of Indian Art.

Singh, Kavita. ed. 2018. *Scent upon a Southern Breeze: The Synaesthetic Arts of the Deccan.* Mumbai: Marg Publications.

Kavita Singh. 2013. "A Knowing Look: Appropriation and Subversion of the Mughal Idiom in Rajput Paintings of the Eighteenth Century" in Mahesh Sharma, Padma Kaimal. ed. *Indian Paintings: Themes, Histories, Interpretations Essays in Honour of B. N. Goswamy.* Place: Mapin Publishing Pvt. Ltd

Overtan, Keelan. 2016. "Book Culture, Royal Libraries, and Persiante Painting in Bijapur, circa 1580-1630", *Muqarnas*, Vol. 33.

Beach, Milo C. YEAR. "Masters of Early Kota Painting" in Beach, Fisher & Goswamy eds. *Masters of Indian Painting*, Vol. II, pp.466-469.

Beach, Milo Cleveland, 1992. *Mughal and Rajput Painting*, *The New Cambridge History of India.* Cambridge: Cambridge University Press. (Reprint 2002).

Aitken, Molly, 2016. "Introduction", *A Magic World: New Visions of Indian Painting.* Mumbai: Marg Foundation, pp. 10-19.

Aitken, Molly. *The Intelligence of Tradition in Rajput Court Painting.* New Heaven and London: Yale University Press.

Crill, Rosemary. 2000. *Marwar Painting: A History of the Jodhpur Style.* Mumbai: Book House.

Sri Brijnathji hunting at Makundgarh, attributed to the Kota Master, c. 1715, Collection of Gursharan S. and Elvira Sidhu. https://www.metmuseum.org/art/collection/search/76219 (Retrieved 5 January, 2019).

Desai, Vishakha N. 1994. "Timeless Symbols: Royal Portraits from Rajasthan 17th to 19th century", in Karine Schomer. ed. *The Idea of Rajasthan: Explorations in Regional Identity*, Vol.1, Delhi: Manohar and AIIS, pp. 316-342.

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY